अंक 3
संख्या 5

शुक्रवार
2 मई
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद्

के
वाद-विवाद
की
सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

भारतीय विधान-परिषद्

शुक्रवार, 2 मई, सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली, में 9 बजे माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में हुई।

---

*__अध्यक्ष:__ मौलिक अधिकारों के अवशिष्ट खण्डों पर हम पुनः वाद-विवाद प्रारम्भ करेंगे। खण्ड 19।

मौलिक अधिकारों पर वाद-विवाद

खण्ड 19—विविध अधिकार

*__माननीय सरदार वल्लभ भाई पटेल__ (बम्बई : जनरल): मैं खण्ड 19 पेश करता हूं जो इस प्रकार है:—

> ''किसी व्यक्ति या कार्पोरेशन की कोई चल या अचल सम्पत्ति जिसमें किसी व्यावसायिक या औद्योगिक कारोबार में उनका हिस्सा भी शामिल है, सार्वजनिक काम के लिये तब तक न ली जायेगी और न उस पर अधिकार किया जायेगा जब तक कि ली हुई या अधिकृत सम्पत्ति के लिए कानून में मुआवजा देने की व्यवस्था न हो और उसमें यह स्पष्ट न कर दिया गया हो कि मुआवजा किन सिद्धान्तों के अनुसार और किस तरीके से तय किया जायेगा।''

मैं इस प्रस्ताव में कोई संशोधन पेश होने की आशा नहीं रखता; पर यदि कुछ हो तो उन पर समय आने पर विचार किया जायेगा।

(संशोधन नं. 86 और 87 पेश नहीं किये गये।)

*__राजा जगन्नाथ बख्श सिंह__ (संयुक्तप्रांत : जनरल): मैं संशोधन नं 88 नहीं पेश करूंगा, महाशय, आपके आदेश से मैं संशोधन नं 59 पेश करूंगा। मेरा प्रस्ताव है:—

> ''खण्ड 19 में 'मुआवजा' के पहले 'उचित' शब्द जोड़ दिया जाये।''

मैं मौलिक अधिकारों को निर्धारित करने के कठिन और पेचीदे कार्य में परिश्रम करने के लिए एडवाइजरी कमेटी को बधाई देता हूं। खण्ड 19 में कहा गया है कि:

> ''किसी व्यक्ति या कार्पोरेशन की कोई चल या अचल सम्पत्ति, जिसमें किसी व्यावसायिक या औद्योगिक कारोबार में उनका हिस्सा भी शामिल है, सार्वजनिक काम के लिये तब तक न ली जायेगी और न उस पर अधिकार किया जायेगा जब तक कि ली हुई या अधिकृत सम्पत्ति के लिए कानून में मुआवजा देने की व्यवस्था न हो।''

मुझे इस सम्बन्ध में सन्देह नहीं है कि एडवाइजरी कमेटी के मस्तिष्क में यह

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[राजा जगन्नाथ बख्श सिंह]

बात थी कि जब कभी कोई चल अथवा अचल सम्पत्ति लेनी हो तो मुआवजे की अदायगी, और वह भी उचित मुआवजे की अदायगी, के बाद ही ऐसा करना चाहिए। पर मेरा ख्याल है कि 'उचित' शब्द उस वाक्य में जोड़े बिना खण्ड का मतलब कुछ अस्पष्ट ही रह जायेगा।

फिर मेरे कथन के समर्थन में अनेक उदाहरण मौजूद हैं। मेरा विश्वास है कि एडवाइजरी कमेटी की दृष्टि में मौलिक अधिकारों की रूप-रेखा निश्चित करते समय अमेरिकन विधान था। एडवाइजरी कमेटी की रिपोर्ट में यह कहा गया है:

> ''इन अधिकारों को न्याय्य बनाने के लिए जो विधान बनाये गये हैं उनको हम बहुत महत्वपूर्ण समझते हैं। कुछ मामलों में 'नागरिक की सुरक्षा का अधिकार' अमेरिकन विधान की विशेषता है और यह आधुनिकतम प्रजातंत्रीय विधान है।''

यदि आप सन् 1791 ई. के अमेरिकन विधान के पांचवें नियम को देखें तो उसकी अन्तिम दो पंक्तियां इस प्रकार पायेंगे:—

> ''.........न निजी सम्पत्ति बिना उचित मुआवजा अदा किये सार्वजनिक उपयोग में लायी जायेगी।।''

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि अमेरिकन विधान 'उचित' शब्द पर विशेष जोर देता है और इसे मुआवजे का विशेषण बना देता है। महाशय, इसके बाद यदि हम डांज़िग के विधान पर दृष्टिपात करें और उसकी तीसरी माला (सीरीज) पर नजर डालते हुए वैधानिक नजीरों के पृष्ठ 69 को पढ़ें, तो आप देखेंगे:

> ''सम्पत्ति के अधिकार सुरक्षित होंगे, किसी की जायदाद कानून की व्यवस्था के अनुसार ही ली जा सकेगी और वह भी सारे समाज के हित के लिए और उसके बदले में उचित मुआवजे की रकम दी जायेगी। यदि मुआवजे की रकम के बारे में कोई झगड़ा हो जाये, तो न्यायालय का आश्रय लिया जा सकता है।''

इसके अतिरिक्त यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं एक और विधान उद्धृत करूं—अर्थात् आस्ट्रेलिया का। आप देखेंगे कि आस्ट्रेलियन उपनिवेश के विधान की धारा 51 में यह व्यवस्था सम्मिलित है:—

> ''किसी व्यक्ति या राज्य की सम्पत्ति की उचित शर्तों के अनुसार अभिप्राप्ति जिसके बारे में पार्लियामेंट को कानून बनाने का अधिकार है।''

मैं सभा का समय अन्य देशों के विधान बनाने में न लगाऊंगा; पर मैं यह कह सकता हूं कि सभा को बेलजियम, बलगारिया, डेन्मार्क, फिनलैंड, अलबानिया और युगोस्लाविया के विधानों में अधिकांश में 'मुआवजे' के पहले उसका विशेषण—'उचित' लगा हुआ मिलेगा; कुछ विधानों में इससे मिलते-जुलते शब्दों का प्रयोग किया गया है। इसलिए मेरा निवेदन है कि जहां तक नजीरों का सम्बन्ध है मेरे प्रस्ताव को अनेक समर्थन प्राप्त हो सकते हैं मेरे ख्याल में सभा के सामने संशोधन

के समर्थन में सभी तर्कों को पेश करना अनावश्यक है, क्योंकि मैं जानता हूं कि सभा के पास समय की कमी है। इसलिए इन शब्दों के साथ ही मैं अपना संशोध न सभा की स्वीकृति के लिए पेश करता हूं।

प्रो. के.टी. शाह (बिहार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैंने खंड 19 में एक संशोधन पेश करने की सूचना दे रखी है:—

''शर्त यह होगी कि व्यक्तिगत निजी सम्पत्ति का अधिकार नदी, बहते पानी, समुद्र तटवर्ती जल, खानें और खनिज पदार्थ पर या जंगल जैसी प्राकृतिक सम्पत्ति पर नहीं होगा।''

पर चूंकि इससे कई पेचीदे सवाल उठते हैं इसलिये मैं इसे पेश न करके यह सलाह देता हूं कि यह एडवाइजरी कमेटी को वापस भेज दिया जाये।

***अध्यक्ष:** क्या यह संशोधन पेश करते हैं?

***प्रो. के.टी. शाह:** नहीं, महाशय।

***अध्यक्ष:** इस खंड में केवल एक संशोधन है। खंड और संशोधन दोनों ही वाद-विवाद के लिए पेश हैं।

***श्री एस. नागप्पा** (मद्रास : जनरल): अध्यक्ष महोदय, इस रिपोर्ट के माननीय प्रस्तावक के इस खंड का समर्थन करने के लिए मैं उठा हूं। यह वह खंड जो जमीन जोतने वालो को कुछ आशा देता है। यह खंड देश के निवासियों से यह प्रतिज्ञा करता है कि संघ-सरकार या प्रदेशों की सरकारें सार्वजनिक हित के लिए भूमि तथा अन्य सम्पत्तियां, व्यक्तियों, कारपोरेशनों, औद्योगिक तथा व्यापारिक कारोबार करने वाले प्रतिष्ठानों से प्राप्त करने जा रही हैं, और यह कि जब वे ऐसा करेंगी तो वह उनको मुआवजा भी अदा करेंगी। महाशय, यह मुआवजा किस तरह दिया जायेगा? इस मामले को सुलझाने में कठिनाइयां हैं। मैं चाहता हूं कि मुआवजा देने में हम न्याय करें। अब सवाल यह उठता है कि उचित मुआवजा क्या है? महाशय, मेरे विचार में जब हम किसी जमींदार की जमीन लें तो उसे उतना मुआवजा न दें जितना वह चाहता हो—हमें उतनी ही मुआवजे की रकम देनी चाहिए जितनी उसकी और उसके परिवार की एक या दो पीढ़ी तक के गुजर-बसर के लिए समुचित हो। कांग्रेस ने चुनाव की घोषणा में जो आश्वासन दिया था उसकी पूर्ति के लिए यह करना आवश्यक होगा। मेरा निवेदन हैं कि उचित मुआवजे के बारे में सरकार मेरी व्याख्या स्वीकार कर ले। उदाहरण के लिए अगर किसी गरीब आदमी की जमीन किसी खास मतलब के लिए ले ली जाती है तो उसे हर्जाना देते समय इस बात की ओर ध्यान देना होगा कि वह उस खास अवस्था में पर्याप्त है। ऐसी अवस्था में सरकार उसे जमीन, का दाम या कुछ और भी दे दे। पर जब सरकार जमींदार से जमीन लेती हैं तो उसे ठीक बाजार भाव से हर्जाना देने की जरूरत नहीं है। आपको मुआवजे का निश्चय करते समय यह भी ध्यान में रखना

[श्री एस. नागप्पा]

पड़ेगा कि जमींदार ने यह जायदाद प्राप्त कैसे की है। श्रीमान्, यही मेरा विचार है।

महाशय, मेरा निवेदन है कि जब आप जमीन ले लेंगे तो आपको खेत जोतने वाले को भू-स्वामी बनाना पड़ेगा तभी हम किसानों को कुछ प्रोत्साहन दे सकेंगे और उन्हें पैदावार तथा देश के गुजारे के लिए राष्ट्रीय धन बढ़ाने में मदद दे सकेंगे। मुझे आशा है कि यह खण्ड उन प्रान्तों के मार्ग में बाधक सिद्ध न होगा जो जमीन का कानून बनाने में लगे हुए हैं। उदाहरण के लिए, आन्ध्र देश के हमारे सम्माननीय नेता श्री टी. प्रकाशम्, मद्रास प्रान्त में जमींदारी प्रथा तोड़ने के लिए बहुत-कुछ कर चुके हैं और मद्रास सरकार इसके लिए कानून बनाने में तेजी से आगे बढ़ रही है। एक बार जमींदारी नष्ट होने पर और सरकार द्वारा भू-सम्पत्ति ले ली जाने पर उसका कर्त्तव्य हो जाता है कि वह उस सम्पत्ति का सदुपयोग करने का प्रयत्न करे। सरकार को चकबन्दी की व्यवस्था करनी होगी, और इस प्रणाली द्वारा अधिकाधिक पैदावार की जायेगी और खेत जोतने वाले को अपने परिश्रम का पूरा बदला मिलेगा। यह विशेष खण्ड देश के गरीब किसानों को यह आशाएं प्रदान करता है।

महाशय, जहां तक उद्योग-धन्धों का सम्बन्ध है, मैं मद्रास व्यवस्थापिका सभा में लगातार यह मांग करता आया हूं कि इनका राष्ट्रीयकरण किया जाये। इसका मतलब यह नहीं हआ कि हमें निजी संस्थाओं को उद्योग-धन्धों को अपनाने के लिए प्रोत्साहन देने की आवश्यकता नहीं है। हमें इस दिशा में आगे बढ़ना है। औद्योगिक दृष्टि से हमारा देश बहुत पिछड़ा हुआ है। अगर हमें शीघ्र आगे बढ़ना है तो हमें अपने उद्योग-धन्धों को सहायता देने और उन्हें जितनी जल्दी सम्भव हो राष्ट्रीयकरण योजना में लाने की जरूरत है। जब निजी उद्योग-धन्धों का पूरा विकास हो जायेगा और जब देश यह समझने लगेगा कि अमुक धन्धा जनहित के लिए सरकार द्वारा हस्तगत कर लिया जाना चाहिए, तो उसके बदले में उचित मुआवजे की रकम अवश्य दी जाये। ऐसे मामलों में यदि हम उन लोगों को इतना धन दें जिस पर वे निर्भर हो सकें, तो वह उचित मुआवजा ही होगा। इस सम्बन्ध में 'उचित' का भावार्थ मैं यही करता हूं।

महाशय, जमींदारी नष्ट करने और उद्योग-धन्धों के राष्ट्रीयकरण के बारे में कानून बनाते समय हमें यह दो मुख्य बातें ध्यान में रखनी होंगी।

मैं एक बार फिर माननीय प्रस्तावक को इस बात के लिए धन्यवाद देता हूं कि उन्होंने किसानों को ध्यान में रखा, जो अपने परिश्रम के परिणाम का उचित भाग प्राप्त करेंगे। अध्यक्ष महोदय, मैं आपको भी धन्यवाद देता हूं कि आपने मुझे इस प्रस्ताव पर बोलने का मौका दिया।

***डॉ. सुरेशचन्द्र बनर्जी** (बंगाल : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मुझे स्वभावतः यह आशा थी कि हम समाजीकरण की ओर कुछ प्रगति करेंगे, खासकर जब हमें

कुछ ही महीनों में स्वतंत्रता मिलने जा रही है। किन्तु इन मौलिक अधिकारों में समाजीकरण के बारे में कुछ भी नहीं रखा गया है। मुझे उस समय प्रसन्नता होती जब श्री के.टी. शाह का संशोधन स्वीकार कर लिया जाता, क्योंकि उसमें समाजीकरण का तत्व था। मैं अनुभव करता हूं कि भारत जैसे देश में, जहां इतनी अधिक दरिद्रता है, जहां मजदूरों और किसानों की दशा ऐसी दयनीय है, समाजीकरण के अतिरिक्त और कोई चीज भावी सुधार की आशा नहीं दे सकती है। इसलिए अगर सभा प्रोफेसर शाह का संशोधन स्वीकार कर लेती तो मैं बहुत प्रसन्न होता। पर मैं जानता हूं कि इस समय हमारे सामने क्या कठिनाइयां हैं। हम जानते हैं कि यहां कितने हितों का प्रतिनिधित्व हुआ है। यहां हमें देशी राज्यों के मामले पर विचार करना है, एंग्लो-इंडियनों के, ईसाइयों के और कितने और भी लोगों के मामलों पर विचार करना है। वास्तव में हमारे लिए यह बड़े सन्तोष का विषय है कि हमें इतने हितों को सम्मिलित न करने का उपाय मिल गया है। इस प्रकार वर्तमान प्रकरण में हम किसी संशोधन के लिए जोर नहीं दे सकते; पर मुझे अब भी आशा है कि निकट भविष्य में जब भारत को अपनी स्वतंत्रता मिलेगी तो किसी-न-किसी तरह का समाजीकरण हमें प्राप्त हो सकेगा। इन शब्दों के साथ मैं खण्ड को ज्यों-का-त्यों पास करने का अनुरोध करता हूं।

***श्री अजित प्रसाद जैन** (संयुक्तप्रांत : जनरल): इस खण्ड पर मैं कुछ कहना चाहता हूं। मैंने इस खण्ड को पूर्णतः निकाल देने का संशोधन पेश किया था; पर अब उसका पेश करना अनावश्यक हो गया है, क्योंकि मैं अपने विचार सामान्य वाद-विवाद में भी प्रकट कर सकता हूं। इस खण्ड में भारत-सरकार के सन् 1935 ई. के एक्ट की 299वीं धारा का उद्धरण दिया गया है और उसको कुछ अंश में परिवर्धित कर दिया गया है। उसमें कहा गया है कि कोई भी सम्पत्ति, चाहे वह चल हो या अचल, सार्वजनिक उपभोग के लिए तब तक न ली जा सकेगी जब तक कानून उसके मुआवजे की अदायगी की व्यवस्था नहीं कर देता। हमें भारत-सरकार की 299वीं धारा को क्रियात्मक रूप में लाने का कुछ अनुभव है। सभा को मालूम होगा कि कई कांग्रेसी प्रान्तों में जमींदारी प्रथा नष्ट करने पर विचार हो रहा है। संयुक्तप्रांत में हमने न्याययुक्त मुआवजा देकर जमींदारी प्रथा तोड़ देने के लिए प्रस्ताव पास कर लिया है। उस प्रस्ताव द्वारा कांग्रेस ने अपनी उस घोषणा का अनुसरण किया है जो उसके पिछले चुनाव के समय की थी। पर मुआवजे की रकम का हिसाब कैसे लगाया जाये, इसके लिए हमें बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है। राज्य की आर्थिक क्षमता का भी सवाल था। यदि हम मुआवजे की रकम ऐसी दर पर निश्चित करते हैं जो सरकार अदा नहीं कर सकती, तब तो जमींदारी प्रथा का अस्तित्व जारी ही रहेगा। हमें यह भी देखना था कि जमींदारों ने भूतकाल में जमींदारी से कितना लाभ उठाया है। जमींदारी प्रथा की उत्पत्ति का प्रश्न भी इस प्रसंग में आ गया, हमारे प्रान्त में कुछ, जमींदारियों तो प्रथम स्वातंत्र्य युद्ध (सन् 1857 ई.) में अंग्रेजों की मदद और धोखेबाजी की सहायता

[श्री अजित प्रसाद जैन]

के लिए बनी थीं। हम जमींदारी के बाजार-भाव की भी उपेक्षा नहीं कर सकते थे। इन सभी तथ्यों पर सावधानी के साथ विचार करने के बाद अब हम जमींदारियों की क्षति-पूर्ति की रकम निर्धारित करने का प्रयत्न कर रहे हैं। दूसरी और जमींदार मुआवजे के शब्द का अर्थ यह लगा रहे हैं कि उन्हें मुआवजे की पूरी रकम अर्थात् जमीन का बाजार-भाव दिया जाये। उनमें से कुछ ने धमकी दी है कि वह 'मुआवजे' शब्द की व्याख्या के लिए फैडरल कोर्ट में जायेंगे। हमें इसमें जरा भी सन्देह नहीं है कि सरकार मुआवजे की पूरी रकम नहीं अदा कर सकती। तब तो हमारे सामने यह बात आ सकती है कि जमींदारी को ज्यों-का-त्यों छोड़ दिया जाये। जमीन लेने का सवाल दो सूरतों में से कोई सूरत ग्रहण कर सकता है। एक तो एक निश्चित जायदाद का निश्चित उद्देश्य के लिए लिया जाना। ऐसी हालत में तो राज्य न केवल उस जायदाद की पूरी कीमत अदा करेगा, बल्कि कुछ और रकम अनिवार्य रूप में जमीन ले लेने के बदले भी देगा, क्योंकि (भूमि-प्राप्ति-विधान) 'लैंड एक्विजीशन एक्ट' के अनुसार ऐसा ही काम करना पड़ेगा। ऐसे भी मामले हो सकते हैं जहां जायदाद एकाकी रूप में नहीं ली जा सकती। यह समाज के हित में, सामाजिक और आर्थिक सुधार के लिये ली जा सकती है। उदाहरण के लिए, सम्भव है कि हमें कारखानों, और राष्ट्रीयकरण के लिए उद्योग-धन्धों पर भी अधिकार करना पड़े। ऐसी दशा में सम्पत्ति समाज के उपयोग के लिए ली जायेगी—उसकी उन्नति और भलाई के निमित्त। इस तरह जायदाद जनता के अधिकांश भाग के हित के लिए ली जाती है और ऐसे मामलों में वह नियम नहीं लागू होगा जो एकाकी जमीन लेने की अवस्था में लागू होता। यह सम्भव है कि राज्य पूरे मुआवजे की रकम न दे सके, वास्तव में ऐसी अवस्थाओं में नाम-मात्र का मुआवजा दिया जा सकता है या बिल्कुल कुछ भी नहीं दिया जा सकता। यह खण्ड अगर वर्तमान रूप में स्वीकार कर लिया गया, तो बड़े पैमाने पर समाज-सुधार या आर्थिक-सुधार के मार्ग में बाधक सिद्ध हो सकता है। यह उन सभी मामलों पर लागू होगा जहां जायदाद सामाजिक या आर्थिक विकास के लिए ली जा रही है। मेरा इरादा यह नहीं है कि राज्य को डाकू या ठग का काम करना चाहिए और उसे लोगों की जमीन मनमाने ढंग से छीन लेनी चाहिए। पर समाज-सुधार का रूप दूसरा ही होता है। इसीलिए बहुत-से संशोधन, जो पेश नहीं किये गए हैं, उनका उद्देश्य वही था जो मेरा है। मेरी राय में विधान में मौलिक अधिकार इसीलिए सम्मिलित किये गये हैं जिससे निर्बलों और असहायों की रक्षा हो। वर्तमान खण्ड का तो बिल्कुल विपरीत प्रभाव पड़ेगा। इससे थोड़े से सम्पत्तिशाली श्रेणी के अल्पसंख्यकों की रक्षा होगी और जन-साधारण को सामाजिक न्याय से वंचित रहना पड़ेगा। इसलिए मैं इस खण्ड के बिल्कुल विरुद्ध हूं और मुझे आशा है कि माननीय प्रस्तावक इसको ध्यान में रखते हुए खण्ड को एडवाइजरी कमेटी के पास वापस भेज देंगे, जिससे आज हम जो विधान पास करें वह इस सामाजिक और आर्थिक सुधार के उन मार्गों में बाधक न सिद्ध हो जो इस देश में समृद्धि और सम्पन्नता

लाने के लए आवश्यक हैं इन थोड़े से शब्दों के साथ मैं अपना दृष्टिकोण सभा के विचारार्थ पेश करता हूं।

*__श्री आर.के. सिधवा__ (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, यह समझा जा सकता था कि देश की जो वर्तमान आर्थिक अवस्था है उसे देखते हुए जमीन किसी दूसरे ढंग से लेने के बारे में कोई व्यवस्था होगी। पर यह बड़े खेद की बात है कि वर्तमान समय में जबकि विभिन्न व्यवस्थापिका-सभाएं जागीरदारी और जमींदारी प्रथा को नष्ट कर देने का निश्चय कर चुकी हैं और केवल थोड़ा-सा मुआवजा देने या उसे भी न देने की बात सोची जा रही है, वहां इस खंड के द्वारा हमें उन सभी जायदादों के लिए मुआवजा देना होगा जो हम ले लेना चाहते हैं। स्वतन्त्र भारत में जहां हम जायदाद का कानून अधिक नरम और जनहित-साधक बनाना चाहते हैं, वहां हम देखते हैं कि हम इस खण्ड को पास करके उच्च श्रेणी के लोगों को सहायता दे रहे हैं।

महाशय, 'जायदाद' शब्द बहुत ही अस्पष्ट है। जायदाद में सार्वजनिक उपयोगी व्यापार—जैसे इलेक्ट्रिक कारपोरेशन, ट्रांसपोर्ट आर्गनाइजेशन आदि सार्वजनिक हित साधन के संगठन भी सम्मिलित हैं। हमें अच्छी तरह मालूम है कि कई प्रांतों में सार्वजनिक उपयोग के प्रतिष्ठानों का राष्ट्रीयकरण हो रहा है और मुझे निश्चय है कि बहुत थोड़े समय में प्राय: सभी सार्वजनिक उपयोग के प्रतिष्ठानों का राष्ट्रीयकरण हो जायेगा। वास्तव में नौकरशाही शासन-प्रणाली के अन्तर्गत रेलवे का राष्ट्रीयकरण 'साख' की वह रकम देकर किया गया है जो सम्भवत: समझौते के द्वारा निर्धारित की गई थी। मैं जानता हूं कि कुछ ऐसे म्युनिसिपल और डिस्ट्रिक्ट बोर्डों ने जिनके अन्तर्गत बिजली के कारबार चलते हैं उन कारबारों के साथ ऐसा समझौता किया है कि वे उनका व्यापार बिना मुआवजे की कोई रकम दिये भी ले सकते हैं। अगर आप यह खण्ड पास करें तो इसका यह अर्थ होगा कि यद्यपि समझौते में ऐसी कोई बात नहीं है, फिर भी हमें उन सार्वजनिक उपयोग के कारबारों को लेने पर उन्हें मुआवजा देना होगा। क्या मैं पूछ सकता हूं कि सार्वजनिक उपयोग के कारोबार, जो जनता के उपयोग और आम हित के लिए ही हैं, और जो सभी देशों में अन्तत: सार्वजनिक सम्पत्ति बन जाते हैं, उनमें लगी हुई पूंजी और मुआवजे की रकम अदा करके लिये जाने की बात क्या उचित है, जबकि मुआवजा देने की कोई व्यवस्था नहीं है? महाशय, मैं अनुभव करता हूं कि जहां तक सार्वजनिक उपयोग के कारोबारों का सम्बन्ध है इस खण्ड में संशोधन होना चाहिए था किन्तु महाशय, मैं असमर्थ हूं क्योंकि मैं कोई संशोधन नहीं पेश कर सका। मैं यह चाहता था कि इस खण्ड में संशोधन होना चाहिए था या उसे ऐसी परिस्थितियों में, जिसका मैंने जिक्र किया है, एडवाइजरी कमेटी के पास वापस भेज देना चाहिए। यदि यह खण्ड भेजा नहीं जा रहा है, तो मुझे आशा है कि मेरी बात पर प्रस्तावक विचार करेंगे क्योंकि इससे जन-साधारण के प्रति अन्याय होगा। यद्यपि समझौते में हर्जाने का कोई खण्ड नहीं है फिर भी हम उसे देने की बाध्य होंगे और छोटे प्रान्तों

[श्री आर.के. सिधवा]

में किसी भी कारोबार को उसकी पूंजी और मुआवजा देकर ही लिया जा सकेगा।

***अध्यक्षः** क्या आपका यह मतलब है कि इस खण्ड से समझौते पर प्रभाव पड़ेगा?

***श्री आर.के. सिधवाः** हां महाशय, इस खण्ड के अनुसार कोई भी सम्पत्ति सार्वजनिक उपयोग के लिये तब तक न ली जा सकेगी जब तक कि कानून उसके हर्जाने की अदायगी की व्यवस्था नहीं करता। महाशय, कानून तो इस खण्ड के अनुकूल ही बनेगा और समझौते में इसके बारे में कुछ न होने पर भी ऐसा हुआ तो मुआवजे की मांग की जायेगी।

***अध्यक्षः** समझौते में तो सम्पत्ति की प्राप्ति की व्यवस्था होगी।

***श्री आर.के. सिधवाः** यदि कानून यह व्यवस्था करता है कि हर्जाना अदा करना है और समझौते में ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है तब तो हम बंध जायेंगे। मैं एक सामान्य समझ के आदमी के रूप में यह अनुभव करता हूं कि अगर कोई ऐसा समझौता है, जिसमें मुआवजे के बारे में कोई व्यवस्था नहीं है और यदि आप मुआवजा देने के लिए एक्ट बना रहे हैं, तो हमसे मुआवजे का दावा किया जायेगा। कानून के विशेषज्ञ इस विषय पर प्रकाश डाल सकते हैं, यदि वे ऐसा करें तो मैं उनके विचारों का स्वागत करूंगा। कोई भी सम्पत्ति या जायदाद का मालिक ऐसी अवस्था में उच्चतम न्यायालय की शरण-लेगा और इस खण्ड के अन्तर्गत अपनी मांग की पूर्ति करा सकेगा।

श्री विश्वम्भर दयाल त्रिपाठीः सभापति जी, मैं आपके सामने उस संशोधन का विरोध करने के लिये खड़ा हुआ हूं जिसे मेरे मित्र राजा जगन्नाथबख्श सिंह ने आपके सामने पेश किया है। राजा जगन्नाथबख्श सिंह ने अपने संशोधन में यह कहा है कि कम्पनसेशन (मुआवजा) शब्द के पहले जस्ट (ठीक) शब्द जोड़ दिया जाये। मैं इसकी बहुत जोर के साथ मुखालफत करना चाहता हूं। जहां तक इस क्लाज (धारा) का सम्बन्ध है इसके शब्द कुछ इस तरह के हैं जिससे मुझे यह अन्देशा है, और मुझे ही नहीं बल्कि मेरे बहुत से मित्रों को भी यह अन्देशा है कि इसका नतीजा (खास तौर से कानूनी नतीजा) जिस प्रकार देश के हित के लिये होना चाहिये वैसा नहीं होगा। मैं चाहता हूं कि इस क्लाज की भाषा तबदील कर दी जाये ताकि इसका नतीजा देश के हित के खिलाफ न हो, जैसा कि हमें अन्देशा है। मैं अब भी, जिन सज्जनों ने यह क्लाज तैयार किया है, उनसे दरख्वास्त करूंगा कि इस पर फिर से विचार करें और विचार करके कोई एक नया फार्मूला (नया मसविदा) हमारे सामने रखें। यह ठीक है और मैं आमतौर से इसे मानता हूं कि अगर हम किसी व्यक्ति की सम्पत्ति लेते हैं तो उसका मुआवजा देना जरूरी है। यह भी मैं मानता हूं कि बहुत हालतों में वह मुआवजा

उस सम्पत्ति की कीमत के मुकाबले में होना चाहिये। लेकिन जहां मैं यह मानता हूं तहां साथ ही साथ यह भी मानता हूं कि हमारे लिये यह भी जरूरी है कि हम देखें कि किसी व्यक्ति के पास जो सम्पत्ति है वह उसके पास किस तरह से आई है। अगर न्याय-संगत तरीके से, जस्ट तरीके से, उसके पास वह सम्पत्ति आई है तो उसको हमें मुआवजा कीमत के हिसाब से देना चाहिये। अगर न्यायसंगत तरीके से उसके पास वह सम्पत्ति नहीं आई है या अगर उसने सम्पत्ति से काफी लाभ उठा लिया है तो उसका पूरा मुआवजा देना या उसकी कीमत देना बिल्कुल गलत है। अगर हम आजकल के सामाजिक तरीके को तबदील करना चाहते हैं, अगर हम जमींदारी और पूंजीवाद के तरीके को वाकई तबदील करना चाहते हैं और साथ-ही-साथ यह भी कहते हैं कि हम मुआवजा देंगे या तो सम्पत्ति राष्ट्र लेगा उसकी पूरी कीमत देगा, तो उसके अर्थ यही होते हैं कि हम सामाजिक तरीकों को बिल्कुल खत्म नहीं कर सकते। अगर हमको यह सामाजिक तरीका खत्म करना है और अगर वाकई जिस तरीके से आल इंडिया कांग्रेस कमेटी ने सन् 1942 के 8 अगस्त वाले प्रस्ताव में कहा है कि हमें ऐसा विधान बनाना है जिसमें वास्तविक शक्ति क्षेत्रों में और कारखानों में काम करने वालों के हाथ में हो, तो हमारे लिये आवश्यक हो जाता है कि इस क्लाज (धारा) पर हम फिर से विचार करें। अगर यह क्लाज ज्यों-का-त्यों रह जाता है तो इसमें कोई संदेह नहीं है कि हमारे उन सिद्धान्तों और एलानों को पूरा करने में, जो हमने अक्सर देश के सामने पेश किये हैं, बेहद दिक्कत होगी। लिहाजा मैं फिर एक बार इस क्लाज (धारा) के बनाने वालों से प्रार्थना करूंगा कि वह इस पर जरा विचार करें। अभी हमारे सामने कई प्रान्तों में जमींदारी के खत्म करने का सवाल पेश है। हमारे सामने यह भी सवाल है कि हम उनको कम्पनसेशन (मुआवजा) दें। हम लोगों के सामने तमाम दिक्कतें आ रही हैं। मैं खुद एक ऐसी कमेटी, यू.पी. की जमींदारी एबोलिशन कमेटी, का सदस्य हूं और मैं दावे के साथ कह सकता हूं कि अगर हमको कीमत के हिसाब से जमींदारी का कम्पेनसेशन (जमीन का मुआवजा) देना पड़ा तो इसमें कोई शक नहीं है कि हमारे लिए करीब-करीब असम्भव हो जायेगा कि हम जमींदारी को खत्म कर सकें; और अगर किसी तरीके से सम्भव भी हुआ तो इसका परिणाम यह होगा कि 20 या 25 साल तक किसान लोग उसी तरीके से भार के नीचे दबे रहेंगे, जिस प्रकार आज दबे हुए हैं। आखिर यह मुआवजा आयेगा कहां से? वह तो गरीबों के पास से ही आयेगा। ऐसी दशा में 20 य 25 साल से जो आर्थिक बोझ किसानों पर लदा हुआ है वह उसी तरीके से लदा रहेगा और कोई लाभ 20 या 25 साल तक किसानों को नहीं होगा। इसके अलावा जो बात राजा साहब ने कही है कि जस्ट कम्पेनसेशन (ठीक मुआवजा) दिया जाये, वह बात बेहद भद्दी-सी है। क्या राजा साहब इस बात के लिए तैयार हैं कि जो आमतौर से जमींदारों के हक या अधिकार (Title) हैं उनकी भी परीक्षा की जाये, और यह देखा जाये कि उनमें से कितने ऐसे हैं जिनके टाइटिल जस्ट (अधिकार ठीक) हैं। अगर वह यह मानने के लिए तैयार हैं तो शायद इस बात पर गौर किया जा सकता है। देश की बहुत-सी ऐसी रियासतें

[श्री विश्वम्भर दयाल त्रिपाठी]

हैं और खासतौर से अवध में जहां के राजा साहब रहने वाले हैं, जो सन् 1857 ई. में इसलिए दी गई थीं कि उनके पाने वालों ने अंग्रेजों का साथ दिया और देश के हित के खिलाफ कार्य किया। इन रियासतों के पाने वालों के पास पहले कोई रियासतें नहीं थीं और उन्हें अंग्रेजों ने गद्दारी के सिलसिले में यह रियासतें सन् 1857 के बाद दीं। राजा जगन्नाथबख्श सिंह साहब कहते हैं कि वे हिन्दुस्तान के साथ सन् 1857 ई. में आजादी की लड़ाई लड़े। जिन लोगों ने स्वतंत्रता के लिए युद्ध किया, मैं उनका स्वागत करता हूं और मैं यह जरूर चाहूंगा कि उनके साथ जो कुछ भी रिआयतें की जा सकती हैं वह की जायें। राजा साहब को मालूम है कि ऐसी मिसालें मौजूद हैं कि बहुत-से लोगों ने अपने देशवासियों के साथ द्रोह किया, गद्दारी की और इस सिलसिले में बड़े-बड़े इलाके पाये। ऐसे लोगों को कम्पेनसेशन (मुआवजा) मांगने का कोई हक नहीं है। उनमें ऐसे भी हैं जिन्हें कोई सरकारी मालगुजारी भी नहीं देनी पड़ती है और वह बराबर 90 साल से मुनाफा उठा रहे हैं। वे किसानों से लगान वसूल करते हैं लेकिन उन्हें सरकार को मालगुजारी की एक कौड़ी भी देनी नहीं पड़ी। अगर किसी ने जमींदारी की कीमत दी है तो 10 साल में उसने उसका पांच या छः गुना वसूल कर लिया है। जमींदारी की जिन्होंने यह रियासतें देश के साथ विद्रोह करके एवज में पाई हैं वे आजकल जस्ट कम्पेनसेशन (ठीक मुआवजा) चाहते हैं। जब तक हम टाइटिल अर्थात् अधिकारों की परीक्षा न करें, उस वक्त तक जस्ट कम्पेनसेशन का कोई सवाल नहीं उठा सकता। अगर जस्ट (ठीक) शब्द न भी रखा जाये तो जैसा क्लाज है उसके भी अर्थ यह लिये जा सकते हैं कि साधारण तौर से हम उन लोगों को कम्पेनसेशन दें, जिनको कोई अधिकार उन रियासतों या जमींदारियों को पाने का नहीं था और जिन्होंने करीब-करीब 90 साल तक लाभ उठाया है, और उनमें से बहुत ऐसे हैं जिनको मालगुजारी भी नहीं देनी पड़ी। ऐसे लोगों को किसी तरह का कम्पेनसेशन देना बिल्कुल गलत होगा। हां इस धारा में थोड़ी-सी 'सेविंग ग्रेस' (बचाव की सूरत) यह है कि राज्य उन सिद्धान्तों और तरीकों का भी निश्चय करेगा जिसके आधार पर मुआवजा देना चाहिए।

मेरी तो स्पष्ट राय है कि हम उनको कुछ मेनटेनेन्स अलाउन्स (गुजारे) के तौर पर थोड़े वर्षों के लिए दें ताकि वह नई और परिवर्तित आर्थिक व्यवस्था में अपना काम कर सकें और उसमें रह सकें। इसमें मुझे कोई एतराज नहीं है। हम यह नहीं चाहते और कोई भी नहीं चाहेगा, कि बहुत से आदमी कल से मुहताज हो जायें, अर्थ-रहित हो जायें और कल के खाने के लिए उनके पास कुछ न रहे। इसीलिए अगर कम्पेनसेशन (मुआवजे) का किसी तरीके से समर्थन किया जा सकता है तो वह उसी आधार पर कि जमींदारों और पूंजीपतियों को कुछ दिनों के लिए मेनटेनेन्स अलाउन्स गुजारे के तौर पर मिलें ताकि वह अपने को नये आर्थिक ढांचे में कायम रख सकें और उन्हें कोई तकलीफ न हो। अगर हम चाहते हैं कि जमींदारी और पूंजीवाद के तरीके को खत्म करें तो मुनासिब है कि कम्पेनसेशन (मुआवजा) सिर्फ कुछ वर्षों के गुजारे के आधार पर ही दिया

जाये। लेकिन मुझे जो भय है, संदेह है, वह यह है कि शायद कानूनी तरीके से इस धारा का ऐसा अर्थ निकाला जाये जिसका नतीजा हो कि हमारी आर्थिक उन्नति आगे के लिए रुक जाये और जिस ओर कांग्रेस और हमारे देश की बड़ी-बड़ी संस्थायें जाना चाहती हैं उधर वह पूरी तौर से न जा सकें। लिहाजा मैं, राजा साहब ने जो संशोधन पेश किया है, उसकी मुखालफत करता हूं और साथ-ही-साथ मैं इस धारा के तैयार करने वाले और अपने सम्मानित मित्रों से प्रार्थना करता हूं कि वे इस पर फिर से विचार कर लें। अगर इसको इसी तरीके से जल्दी में पास किया गया तो संभव है कि इसका परिणाम भयंकर हो। लिहाजा मैं यह दोनों प्रार्थनायें आपके सामने रखता हूं और उम्मीद करता हूं कि सभापति जी और हमारे अन्य मित्र हमारी इस प्रार्थना को स्वीकार करेंगे।

***श्री बी.सी. केशव राव** (मद्रास : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं इस खण्ड का समर्थन करने के लिए खड़ा हुआ हूं; मैं उस पर अपना भी मत प्रकट करना चाहता हूं।

यह खण्ड उन नागरिकों को मुआवजा देने की व्यवस्था करता है जिनकी सम्पत्ति सार्वजनिक उपभोग के लिए ले ली जायेगी। जब राज्य किसी व्यक्ति की सम्पत्ति ले लेता है, तो वह सार्वजनिक हित के लिए ही ऐसा करता है—व्यक्तिगत लाभ के लिए नहीं। अगर इस तरह राज्य द्वारा सम्पत्ति लिये जाने पर उसका स्वामी उससे वंचित होकर अपनी आजीविका से हाथ धो बैठता है, तो उसे उस जायदाद के बराबर की कीमत मिल जानी चाहिए और मेरे ख्याल में इस प्रकार के मुआवजे का विरोध कोई नहीं करेगा।

हम स्वतन्त्र भारत के लिए शासन-विधान बना रहे हैं। हम ब्रिटेन से भारत छोड़कर चले जाने को कह रहे हैं, यद्यपि वे यहां दो सौ वर्ष पहले आये थे। हम जानते हैं कि अंग्रेजों ने अनुचित ढंग से भारत को प्राप्त किया था, परिश्रम करके नहीं। इस देश के मालिक होने के नाते हमें यह अधिकार है कि उनसे यह देश छोड़कर चले जाने के लिए कहें, और हमारी मांग के जवाब में वह जून सन् 1948 ई. तक भारत छोड़ रहे हैं। स्वतन्त्र भारत में कोई भी दूसरे के द्वारा शोषित नहीं होना चाहता। बड़े जमींदारों और भू-स्वामियों ने परिश्रम करके अपनी सम्पत्ति नहीं प्राप्त की है। इस दृष्टि से बड़े जमींदार और ब्रिटिश साम्राज्यवादी में कोई अन्तर नहीं है। ब्रिटेन ने साम्राज्य प्राप्त किया था और जमींदारों ने जायदाद दोनों ने अपना हित-साधन शोषण द्वारा ही किया।

स्वतन्त्र भारत में सभी नागरिकों का दर्जा समान होना चाहिए। वर्तमान प्रचलित प्रणाली को देखते हुए यह बात कुछ समय तक सम्भव नहीं है। किसानों की यह आम पुकार है कि उसकी सारी पैदावार जमींदार ले लेता है, यद्यपि उसमें से कुछ अंश की उसे अपने परिवार-पालन के लिए आवश्यकता होती है। उसके लिए भूखों मरने के सिवा और कोई चारा नहीं है। क्या राज्य उसे कोई आजीविका या मुआवजा उस हानि के बदले देने को तैयार है जो उसने अपनी शक्ति खोकर

[श्री बी.सी. केशव राव]

और परिश्रम करके उठाई है? परन्तु अगर एक जमींदार जो गरीब को चूस कर धन-संग्रह करता है, अपनी जायदाद का एक भाग सार्वजनिक हित के लिए खो देता है, तो राज्य उसके लिए मुआवजा देने का विचार करता है, यद्यपि उसके लिए यह कोई नुकसान नहीं है। किसान इस समय इसके लिए अनुरोध कर रहे हैं कि उनकी जमीन की मालगुजारी घटा दी जाये। किन्तु इसके बदले उनकी थोड़ी बहुत जमीन भी, जिसको वे जोतते चले आ रहे हैं और जिसके सहारे अपने कुटुम्ब का गुजर बसर करते हैं, छीन ली जायेगी। जमींदार तो जमीन को बंजर छोड़ देने को तैयार हैं, पर लगान घटाने को नहीं। इस तरह वह अपने आसामियों को भूखों मार रहा है।

अन्त में मैं यह बताना चाहता हूं कि कांग्रेस जमींदार प्रथा तोड़ने के लिए कहती आ रही है और गत निर्वाचन में भी उसने जनता से प्रतिज्ञा की थी कि कांग्रेस अधिकार प्राप्त करते ही जमींदारी प्रथा तोड़ देगी। उसके अनुसार कांग्रेसी प्रान्तों ने जमींदारी प्रथा नष्ट करने के लिए बिल तैयार कर लिये हैं अब जब हमें स्वतंत्र भारत का विधान तैयार करने को कहा गया है तो हम उन्हें ऐसे मुआवजे की रकम देना चाहते हैं जिसका निश्चय कानून करेगा। यह कानून जमींदारों के पक्ष में होगा और वे उससे ज्यादा पायेंगे जितना कि उन्हें देना जरूरी है।

इन तथ्यों को सामने रखते हुए मैं सभा से अनुरोध करता हूं कि इस खण्ड पर विचार करके उसमें इस प्रकार के संशोधन कर दें जिससे किसी भी नागरिक या कारोबार को उसकी जायदाद का मुआवजा नाम-मात्र ही दिया जाये।

***राय बहादुर श्यामानन्दन सहाय** (बिहार : जनरल): महाशय, मैं उस संशोधन के सम्बन्ध में कुछ निवेदन करना चाहूंगा जो मेरे माननीय मित्र राजा जगन्नाथबख्श सिंह ने पेश किया है। उनके संशोधन में केवल 'उचित' शब्द मुआवजे के पहले जोड़ देने की मांग है। मैं चिन्तित होकर और सावधानी के साथ वाद-विवाद सुनता रहा हूं और मुझे कहना चाहिए कि अब तक मैंने किसी से भी यह नहीं सुना कि मुआवजा देने में न्याय नहीं करना चाहिए। किसी ने भी यह नहीं कहा और मैं यह कहने का साहस कर सकता हूं कि न कोई आगे ही कहेगा कि एक बार जब हम ली हुई जायदाद के बदले मुआवजा देने का सिद्धान्त स्वीकार कर लें, तो ऐसा हर्जाना उचित न हो। इस आदरणीय सभा में किसी का भी यह विचार नहीं होगा। आखिर इस देश का भविष्य उस न्याय और सद्व्यवहार पर ही निर्भर है, जिससे हम अपने सामने आई हुई विभिन्न समस्याओं के सुलझाने में काम लेंगे और उस योग्यता और चातुर्य पर भी, जो हम अन्तर्राष्ट्रीय नीति के मामलों को सुलझाने में प्रदर्शित करेंगे। मेरा निवेदन है कि जिन लोगों के पास इस समय जमीनें हैं उनके बारे में चाहे जो कहा जाये, पर इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता है कि किसी समय दो सदी पहले वे ही इस देश के आर्थिक ढांचे के निर्माता थे। उन्होंने धन कमाया और उसे पैदा किया है; पर क्या इसी कारण

उनकी जमीन बिना मुआवजा दिये छीन ली जाये और मौलिक अधिकारों में मुआवजा देने की बात स्वीकार करके भी अब यह कहा जाये कि मुआवजा उचित न हो? मैं नहीं समझता कि ऐसा कोई भी प्रस्ताव इस सभा के सामने रखा जा सकता है और अगर रखा भी जाये तो वह इस सभा को स्वीकार हो सकता है।

महाशय, वह मांग क्या है जो इस संशोधन द्वारा पेश की गई है? इसमें केवल यह कहा गया है कि मुआवजे के साथ विशेषण भी जुड़ना चाहिए। माननीय प्रस्तावक ने संसार के अन्य देशों के विधानों का हवाला दिया है, जहां मुआवजे के पहले 'उचित' शब्द विशेषण के रूप में रखा गया है। केवल यही शब्द विशेषण के लिए नहीं प्रयुक्त हुआ है। यदि हम मौलिक अधिकारों की विधान-माला का हवाला दें जिनमें सर श्री बी.एन. राव ने हम सबको दिया है, तो यह मालूम होगा कि जर्मन-विधान तक में 'उचित मुआवजा' शब्द रखे गये हैं। उसमें कहा गया है— ''जायदाद केवल उसी हालत में ली जा सकती है जब वह सर्व साधारण के लिए उपयोगी हो और कानून में इसकी व्यवस्था हो, उसका उचित मुआवजा अदा किया जायेगा''। इसलिए मेरा निवेदन है कि फंडामेंटल राइट्स सब-कमेटी (बुनियादी अधिकार उप-समिति) की रिपोर्ट द्वारा जो कुछ अभिप्रेत है उसका वास्तविक अभिप्राय 'उचित' शब्द रख देने मात्र से हो जायेगा; लेकिन यदि कुछ सदस्य यह तर्क दें कि आप वहां ''मुआवजा'' शब्द भी रख सकते हैं परन्तु आपको इसके लिये तैयार रहना चाहिये कि विशेष परिस्थितियों में वह अनुचित मुआवजा भी हो सकता है, तो महाशय, मैं कहूंगा कि यह इस समस्या को हल करने का ठीक ढंग नहीं है और न यह तर्क ही न्याय-संगत है।

महाशय, जिन लोगों ने इस संशोधन का विरोध किया है उनका तर्क जमींदारी ले लेने के सवाल तक ही सीमित रहा है। दुर्भाग्यवश इन मित्रों ने या तो जान-बूझकर इसकी अपेक्षा की है या वे यही नहीं समझ सके हैं कि मुआवजे का खण्ड केवल जमींदारों से ही सम्बन्ध नहीं रखता। यह देश की सभी चल और अचल सम्पत्ति से सम्बन्ध रखता है चाहे वह संघ में हो या प्रदेशों में। आगे चलकर देश के व्यापक हित को ध्यान में रखते हुए काश्तकारी या किसानों की जमीन भी ले ली जा सकती है। अगर आप सहकारी कृषि-पद्धत्ति के अनुसार खेती कराना चाहेंगे, या सारे समाज की खेती बड़े चक के रूप में कराना चाहेंगे तो किसानों से भी जमीन ले लेने की नौबत आ सकती है। क्या उस अवस्था में आप कृषकों को भी उचित मुआवजा देने से इन्कार करेंगे? इसलिये इस प्रकार के प्रस्ताव में जिसका क्षेत्र ऐसा व्यापक है कि वह जमींदारी तक ही परिसीमित नहीं किया जा सकता बल्कि व्यापारिक हितों पर भी लागू हो सकता है, सन्देह का कोई स्थान न होना चाहिये। यदि मैं यह निवेदन कर सकूं तो कहूंगा कि शक्ति पर सत्य के विजय के सिद्धान्तों को निजी सम्पत्ति के अधिकार और उसकी रक्षा से परिपुष्टि प्राप्त होती है। आप चाहें तो उसे समाप्त कर सकते हैं पर ऐसा हुआ तो हम सब धीरे-धीरे जंगली कानून की ओर चले जायेंगे और समाज को

[रायबहादुर श्यामानन्दन सहाय]

सुसंगठित रखने वाले कानून लुप्त हो जायेंगे। कुछ मित्रों ने उस तथ्य का हवाला दिया है कि कुछ जायदादें राष्ट्र-विरोधी कार्यों के लिए ही लोगों को सन् 1857 ई. की क्रान्ति में प्राप्त हुई थीं। माननीय प्रस्तावक ने इस कथन पर आपत्ति की है। मैं कुछ और आगे जाऊंगा और निवेदन करूंगा कि शायद हम माननीय मित्रों को यह मालूम नहीं है जमींदारी प्रथा क्या है, और इसीलये उन्होंने यह परिणाम निकाल लिया है कि बहुत से अधिकांश जमींदारों ने जमीनें सन् 1857 ई. की क्रांति के फलस्वरूप सरकारी तोहफे के रूप में प्राप्त की थीं। यह भूलते हैं कि देश के कुछ भागों में स्थायी बन्दोबस्त एक्ट (Permanent Settlement Act) सन् 1793 ई. में ही जारी हो गया था जो सन् 1857 की क्रान्ति से बहुत पहले की बात है। यह नहीं कहा जा सकता कि एक्ट के अनुसार बने जमींदारों को अराष्ट्रीय कृत्यों के बदले भू-सम्पत्ति प्राप्त हुई थी। कुछ लोग ऐसे हुए होंगे जिनका व्यवहार लोगों को पसन्द नहीं आया होगा; पर आप एक समाज के साथ व्यवहार कर रहे हैं; व्यक्ति विशेष के साथ नहीं। आप सारी भूमि-समस्या पर विचार कर रहे हैं, और जब आप ऐसा कर रहे हैं तो यह जरूरी है कि सभी प्रश्न और सम्पूर्ण चित्र हमारे विचार की परिधि में हों। ऐसे भी बहुत से लोग हैं जिन्होंने बड़ी-बड़ी रकमें देकर जमींदारियां खरीदी हैं—यह कोई सैकड़ों वर्ष पहले की बात नहीं है जैसा कि कुछ लोग समझते हैं। जमींदारियों का क्रय-विक्रय प्रतिदिन होता ही रहता है। इस वर्ष भी लोगों ने काफी रकमें लगाकर जमींदारियां खरीदी हैं और वह रुपये उनकी जन्म भर की पसीने की कमाई से जमा हुए थे। कौन नहीं जानता कि कुछ ही साल पहले तक हमारी बचत का मुख्य भाग जमीन में ही लगा हुआ था? उनका उचित और न्याययुक्त मुआवजा न देना अच्छा न होगा। महाशय, मैं माननीय प्रस्तावक से यह निवदेन करता हूं मुख्य खंड के मुआवजा शब्द का अर्थ ही है, उचित और अच्छा बदला देना। मेरी राय में मुआवजा अनुचित और अन्यायपूर्ण हो ही नहीं सकता, और मेरा निवेदन है कि यदि मुख्य खंड के माननीय प्रस्तावक मेरे ही सदृश भावना रखने वाले हों और यह समझते हों कि मुआवजे का अर्थ उचित और न्यायसंगत मुआवजा ही होता है तो उन्हें मेरी यही सलाह है कि वह इस संशोधन पर जोर न दें।

*__राजा जगन्नाथ बख्श सिंहः__ महाशय, जो वाद-विवाद हुआ है उसे देखते हुए मैं अपने संशोधन पर जोर न दूंगा। मैं अपना प्रस्ताव वापस लेता हूं।

(सभा की अनुमति से संशोधन वापस ले लिया गया।)

*__अध्यक्षः__ अब केवल पूरे खंड के बारे में वाद-विवाद होगा।

*__श्री लक्ष्मीनारायण साहू__ (उड़ीसा : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं खंड के वर्तमान रूप को पसन्द करता हूं, फिर भी कुछ कहना चाहता हूं विशेषतया मैं उड़ीसा

की जमींदारियों के सम्बन्ध में उड़ीसा में आसामियों की दशा बहुत खराब है। इसका कारण यही है कि उड़ीसा में अंग्रेजी की शिक्षा बंगाल और अन्यत्र की अपेक्षा बाद में शुरू हुई। हुआ यह कि उड़ीसा की जमींदारी उन जमींदारों के नाम कर दी गई जो वास्तव में वहां न होकर बंगाल में थे। इसका परिणाम यह हुआ कि उत्तरी उड़ीसा अर्थात् बालासोर, कटक, पुरी और सम्बलपुर के जिलों की दो-तिहाई भूमि अनुपस्थित जमींदारों के अधिकार में है जिसका परिणाम अत्यन्त भयानक हुआ है। जब उन्होंने यह जमींदारियां खरीदीं तो उन्होंने उनकी अच्छी कीमतें नहीं दीं, वास्तव में सरकारी कागजात से तो ऐसा ही प्रतीत होता है कि वह जमीन की खरीदारी क्या थी, दिन-दहाड़े डाका था। इसलिये मैं यह नहीं समझता कि ऐसे जमींदारों को मुआवजे की रकम क्यों दी जाये जिन्हें अप्रत्याशित संयोग या दिन-दहाड़े डाके द्वारा ऐसी जमीनें प्राप्त हों गई थीं।

दूसरी बात यह है कि मैं सभा का ध्यान एक दूसरे जमींदार की ओर आकर्षित करूंगा जो जपूर के हैं। जपूर जमींदारी सारे कोरापुट जिले में है जो उड़ीसा के छः जिलों में एक है। यह एक करुणाजनक बात है कि यह जमींदार 16,000 रु. सालाना सरकार को देकर इस जमींदारी से 16 लाख रुपये सालाना की आमदनी करता है। यह स्थिति बहुत खराब है और इसका उपाय होना ही चाहिए। ऐसे जमींदारों के होते हुए शासन-संचालन कठिन है। इसलिए मैं कहता हूं कि मुआवजे की रकम देते समय—यही नहीं प्रत्युत उचित मुआवजे की रकम अदा करते समय हमें बंगाल के इन अनुपस्थित जमींदारों के प्रति बहुत न्याय से काम लेना चाहिए और उड़ीसा की जपूर के जमींदार की तरह अन्य जमींदारों के प्रति भी। मैं यहां खास बातें कहना चाहता था विशेषतया उड़ीसा के बारे में।

दूसरी बात मैं यह कहना चाहता हूं कि भविष्य में प्रजातन्त्र-राज्य का निर्णय करते हुए, हम यह सहन नहीं कर सकते कि ऐसे जमींदारों का अस्तित्व कुछ और समय के लिए कायम रहने दिया जाये क्योंकि यह स्थिति अत्यन्त कष्टप्रद है। जमींदारों को तो जितनी ही जल्दी रकम थमाकर विदा किया जा सके उतना ही अच्छा होगा। मुझे इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं कहना है कि आजकल 100 जमींदारों में कम-से-कम 99 ऐसे हैं जो बदनाम हैं और उन पर जिन कर्त्तव्यों का बोझ लदा है उनका वे पालन नहीं करते। उदाहरण के लिए, जमींदार के एक कर्त्तव्य पर विचार कीजिये। सरकार के द्वारा उनके निश्चित कर्त्तव्यों में एक यह भी है कि वे किसानों की भलाई का ध्यान रखें, पर जमींदार ऐसा कभी नहीं करते। इसके विपरीत किसानों से अत्यधिक लगान वसूल करते हैं। वह कितने ही गैर-कानूनी कर वसूल करते हैं। यदि मुझे उनका वर्णन एक-एक करके करने का अवसर मिले तो बहुत बड़ी सूची तैयार हो जायेगी। उड़ीसा की जमींदारियों में से एक में तो बहुत बड़ा आन्दोलन हुआ है, जिसका नाम है, कनिका जमींदारी— वहां 64 प्रकार के गैर-कानूनी कर वसूल किये गये थे। आन्दोलन होते हुए भी वह स्थिति आज ज्यों-की-त्यों बनी हुई है। किसानों को कितनी ही तरह से परेशान

[श्री लक्ष्मीनारायण साहू]

किया जाता है। इसलिये जब हमें प्रजातंत्र-राज्य शीघ्र ही दिये जाने की प्रतिज्ञा की गई है, तो हम जमींदारों के अत्याचार सहन नहीं कर सकते। उन्हें जितनी जल्दी दे ले कर विदा कर दिया जाये उतना ही अच्छा।

***श्री सत्यनारायण सिन्हा:** महाशय, मेरा प्रस्ताव है कि सवाल अब मतदान के लिए रखा जाये। उस पर काफी वाद-विवाद हो चुका है।

***अध्यक्ष:** मेरे पास कुछ और नाम हैं—श्री फूलसिंह।

***श्री फूलसिंह:** जनाबेआला, बहुत-सी तकरीरें इस हाउस में हुईं। इससे यह मालूम होता है कि जमींदारी के एबोलिशन के मसले पर कुछ मुआवजा दिये जाने की तजवीज है। यह सही है कि जैसा कि श्री विश्वम्भरदयाल त्रिपाठी ने कहा कि जमींदारी को बहुत से लोगों ने मुल्क के खिलाफ गद्दारी करके हासिल किया था और उसके जवाब में एक राजा साहब ने फर्माया कि कुछ लोगों ने आजादी की लड़ाई में मुल्क की मदद भी की है। मुझे यह अर्ज करना है कि ऐसे लोगों को कुछ इनाम नहीं मिला जिन लोगों ने मुल्क की मदद की है। उस लड़ाई में तो जमींदारियां छीनी गई थीं। ऐसा केस तो एक अजीब केस होगा कि सरकार के खिलाफ लड़ने में किसी को रियायत मिली हो। बहरहाल अभी तक जो मुआवजे का सवाल है उसकी एक बड़ी वजह तो गवर्नमेंट ऑफ इंडिया एक्ट सन् 1935 में बयान की जाती है, और जब कभी लोगों की तरफ से यह सवाल उठाया जाता था कि मुआवजा न दिया जावे तो जवाब में यह कहा जाता था कि गवर्नमेंट ऑफ इंडिया एक्ट, 1935 के खत्म होने के बाद यह बात हो सकती है, लेकिन आज वही खण्ड यह कान्स्टीट्यूट असेम्बली पास करे और उसे हमारे कॉन्स्टीट्यूशन में न रखकर फंडामेंटल राइट्स में रख देने से मैं समझता हूं आइन्दा के लिए रास्ता बन्द कर देना होगा। जमींदारी के मुताल्लिक काफी साहिबान ने बयान किया लेकिन जमींदारी से भी बड़ा मसला इंडस्ट्री का है, कौन नहीं जानता कि इन लड़ाई के 56 सालों में बहुत से मिल मालिकों ने अपनी पूंजी का कई गुना रुपया उस पर मुनाफे का वसूल कर लिया है। टैक्सटाइल इंडस्ट्री में जहां पेडअप कैपीटल 50 करोड़ के करीब है, कई सौ करोड़ रुपए मुनाफे का वसूल हो गया है।

इस मुल्क का और मुल्कों के साथ मुकाबला करना भी बहुत मुनासिब नहीं होगा। इतना ज्यादा मुनाफा किसी मुल्क के कैपिटलिस्टों ने इस लड़ाई से नहीं उठाया जितना यहां के लोगों ने उठा लिया है। इसलिए मैं यह अर्ज करना चाहता हूं कि ऐसे खण्ड को इस तरह से पास करने से तो शायद हम इस मुल्क के रिफार्म के रास्ते को मुस्तकिल तरीके से बन्द करने के खतरे में पड़ जायेंगे। मैं अपने बुजुर्गों से और उन साहिबान से दरख्वास्त करना चाहता हूं, जिनके हाथ में इस हाउस की नाव है, कि वे इस खण्ड पर दोबारा गौर करें और इसको इस तरीके से रखें कि आपके आइन्दा आने वाले लोग अगर किसी किस्म की सलाह यहां के मामलों में करना चाहें तो वह सलाह करना नामुमकिन न हो

जाये। जिस तरह से यह दफा 19 इस हाउस के सामने रखी गई है, अगर वह उसी तरह से पास हो गई तो फिर इंडस्ट्री का नेशनेलाइज करना नामुमकिन नहीं तो बहुत हद तक मुश्किल हो जायेगा। मैं हाउस का बहुत वक्त न लेकर महज यह दरख्वास्त करना चाहता हूं कि इस दफा को फिर मजीद गौर के लिए वापस कर दिया जाये।

*__श्री राजकृष्ण बोस__ (उड़ीसा : जनरल): महाशय, मेरा प्रस्ताव है कि यह प्रश्न मत लेने के लिए रखा जाये।

*__अध्यक्ष:__ एक प्रस्ताव है कि प्रश्न अब मत लेने के लिए रखा जाना चाहिए। मेरा ख्याल है कि काफी बहस हो चुकी है, इसलिए मैं सभा का मत जानना चाहूंगा। सवाल यह है कि यह प्रश्न अब मत जानने के लिए सभा के सम्मुख रख दिया जाये।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

*__अध्यक्ष:__ सरदार पटेल अब अपना जवाब देंगे।

*__माननीय सरदार वल्लभ भाई पटेल:__ महाशय, इस विषय के वाद-विवाद में कुछ प्रसंगान्तर हो गया है। किसी ने एक संशोधन पेश किया था जो बाद में वापस ले लिया गया; पर जिन लोगों ने विवाद में भाग लिया उनकी यही धारणा रही कि यह खण्ड जमींदारी हस्तगत करने के लिए ही रखा गया है। इसका संक्षेप में यह मतलब हुआ कि खण्ड का वास्तविक अर्थ नहीं समझा गया। कितने ही सार्वजनिक कार्यों के लिए भूमि की आवश्यकता पड़ेगी। केवल जमीन ही नहीं, कितनी ही अन्य चीजें भी प्राप्त करनी होंगी, और राज्य इन चीजों को मुआवजे की रकम देकर लेगा; वैसे ही नहीं छीन लेगा। खण्ड का वास्तविक अर्थ यही है। पर जमींदारों और उनके कुछ प्रतिनिधियों ने समझा कि उनकी हित-रक्षा संशोधन पेश करके या भाषण देकर करनी चाहिए। पर इस तरह वह उनकी हित-रक्षा नहीं कर सकते। उन्हें समय को पहचानना और उसके साथ चलना चाहिए। यह खण्ड कल या परसों ही कानून नहीं बन जाने वाला है, इसमें कम-से-कम एक वर्ष और लगेगा और उसके पहले ही सारी जमींदारियां समाप्त कर दी जायेंगी। विभिन्न प्रान्तों के वर्तमान एक्टों के आधीन भी जमींदारियों को समाप्त करने के लिए कानून बन रहे हैं और यह या तो न्यायसंगत या काफी मुआवजा अदा करके किया जा रहा है या वहां की व्यवस्थापिका सभाएं जिस तरह भी उचित समझ रही हैं, कर रही हैं। इसलिए यह समझना गलत होगा कि यह खण्ड उनके प्रति परिलक्षित किया गया है। बात ऐसी नहीं है। सम्पत्ति-प्राप्ति की प्रक्रिया पहले से मौजूद है और व्यवस्थापिका-सभाएं जमींदारियां खत्म करने के लिए कार्यवाही कर रही हैं। इसलिए हमें इस सवाल पर विचार करने की जरूरत नहीं है कि जमींदार भूतकाल में देशभक्त रहे हैं या खतरनाक अथवा कुछ और। यह सब बातें अप्रासंगिक हैं; हमें भूतकाल की ओर देखने की जरूरत नहीं है।

[माननीय सरदार वल्लभ भाई पटेल]

इस खण्ड में कोई संशोधन पेश नहीं किये हैं, इसलिए मुझे इस सम्बन्ध में जवाब के रूप में कुछ नहीं कहना है। मेरा प्रस्ताव है कि यह खण्ड जिस रूप में मैंने पेश किया है, पास किया जाये।

*__अध्यक्षः__ मैं खंड नं. 19 सभी के सामने रखता हूं।

खण्ड 19 स्वीकार कर लिया गया।

*__अध्यक्षः__ अब हम खण्ड 20 पर आते हैं।

खण्ड 20—विविध अधिकार

*__माननीय सरदार वल्लभ भाई पटेलः__ मैं खण्ड नं. 20 पेश करता हूं।

(1) किसी व्यक्ति को अपराध के लिए तब तक सजा न दी जायेगी जब तक कि उसने उस कानून का उल्लंघन न किया हो जो उसके ऐसा काम करते समय जिसे अपराध ठहराया गया हो, प्रयोग में था और न उसे उस सजा से अधिक सजा दी जायेगी जो उसके अपराध करते समय कानून द्वारा दी जाती।

(2) एक व्यक्ति पर एक ही अपराध के लिए एक बार से अधिक मुकदमा नहीं चलाया जायेगा और न वह किसी फौजदारी के मुकदमें में अपने विरुद्ध गवाही देने के लिए मजबूर किया जायेगा।

मैं नहीं समझता कि इस खण्ड में कोई संशोधन होगा और मैं प्रस्ताव करता हूं कि यह खण्ड स्वीकार किया जाये।

*__अध्यक्षः__ मुझे इस खण्ड में भी संशोधन की कई सूचनाएं मिली हैं। मैं संशोधन-कर्ताओं से कहूंगा कि यदि वे चाहें तो इन संशोधनों को पेश करें। श्री कामत।

*__श्री एच.वी. कामत__ (मध्यप्रांत और बरार : जनरल): महाशय, जहां तक संशोधन नं. 95 का सम्बन्ध है, बाद में छान-बीन करने पर प्रकट हुआ है कि मेरी बात खण्ड 9 के अन्तर्गत आ जाती है, और इसलिए मुझे अपना संशोधन पेश करने की आवश्यकता नहीं है। रहा मेरा संशोधन नं. 96, मैं चाहता हूं कि मैं इसे बाद में पेश करने का अपना अधिकार सुरक्षित रखूं।

*__अध्यक्षः__ श्री रोहिणी कुमार चौधरी नं. 97।

*__श्री रोहिणी कुमार चौधरी__ (आसाम : जनरल): यदि आप आज्ञा दें तो मैं अपना संशोधन अभी पेश कर सकता हूं। इसका सम्बन्ध आग्नेय अस्त्रों के रखने और मृत्यु दण्ड खत्म करने के महत्वपूर्ण प्रश्नों से है। परन्तु यदि इसे नया खण्ड माना जाये, तो फिर इसे अन्य नये खण्डों के साथ पेश करना अच्छा होगा।

*__अध्यक्षः__ यह नया खण्ड होगा।

*__श्री रोहिणी कुमार चौधरीः__ तो मैं पेश नहीं करता हूं।

*__अध्यक्षः__ इसका मतलब यह है कि इस खण्ड में कोई संशोधन नहीं है। मैं इस खण्ड को सभा के सामने रखता हूं।

खण्ड 20 स्वीकार कर लिया गया।

*__अध्यक्षः__ अब हम खण्ड 21 लेते हैं।

खण्ड 21—विविध अधिकार

*__माननीय सरदार वल्लभ भाई पटेलः__ महाशय मैं खण्ड 21 पेश करता हूं।

(1) यूनियन की सीमा के अन्दर सब जगह और उसके हर एक प्रदेश में यूनियन के सरकारी एक्टों, कागजात और अदालती कार्यवाही को ठीक समझा जायेगा और उसका विश्वास किया जायेगा और यह यूनियन का कानून निर्धारित करेगा कि इन एक्टों, कागजात और कार्यवाहियों को किन दशाओं में और किन तरीकों से साबित किया जाये यह और कि इनका असर क्या होगा।

(2) किसी प्रदेश में दिये हुए दीवानी के अन्तिम फैसले, उन शर्तों के विपरीत न जाते हुए जो यूनियन के कानून द्वारा लगाई गई हों, यूनियन की सीमा के अन्दर सब जगह इजरा किये जायेंगे।

मैं उसे नियमित रूप से विचार के लिये सभा के सामने रखता हूं।

अध्यक्षः इस खण्ड के बारे में मुझे किसी संशोधन की सूचना नहीं मिली है। इसलिये मैं इसे सभा के सामने मतदान के लिये रखता हूं।

खण्ड 21 स्वीकार कर लिया गया।

*__अध्यक्षः__ खंड 22।

खण्ड 22—वैधानिक उपचारों का अधिकार

*__माननीय सरदार वल्लभ भाई पटेलः__ श्रीमान्, मैं खंड 22 पेश करता हूं—

(1) इसका आश्वासन दिया जाता है कि इस भाग के द्वारा जिन अधिकारों का आश्वासन दिया गया है उनको प्रयोग में लाने के लिये, उचित कार्यवाही द्वारा सर्वोच्च अदालत से दरख्वास्त करने का अधिकार होगा।

(2) दूसरी अदालतों को इस संबंध में जो अधिकार दिये गये हैं उनके विपरीत न जाते हुए सर्वोच्च अदालत को शरीर उपस्थित होने की आज्ञा (Habeas corpus) नीचे की अदालत को आज्ञा (Mandamus), निषेध की आज्ञा (Prohibition), अपना अधिकार साबित करने की आज्ञा (Quo Warrants), और नीचे की अदालत से मुकदमे हटाने की आज्ञा (Certiorari) के रूप में आदेश देने का अधिकार होगा जो कि उस अधिकार की समुचित सुरक्षा के लिये होगा जिसका विधान के इस भाग में आश्वासन दिया गया है।

[माननीय सरदार वल्लभ भाई पटेल]

(3) इन उपचारों को प्रयोग में लाने का अधिकार उस समय तक स्थगित न किया जायेगा जब तक कि विद्रोह या आक्रमण या दूसरी गम्भीर परिस्थिति के उत्पन्न होने पर, सार्वजनिक सुरक्षा के लिए इसकी आवश्यकता न हो।

श्रीमान्, इस खण्ड के बारे में सम्भव है कुछ संशोधन पेश किये गये हों।

***अध्यक्ष:** कई संशोधनों की सूचनाएं मुझे मिल चुकी हैं। एक सर बी.एल. मित्तर का है।

***श्री बी.एल. मित्तर** (बड़ौदा): मुझे विश्वास दिलाया गया है कि जब जुडीशियरी रिपोर्ट सामने आयेगी तब इस पर विचार होगा। इसलिए मैं अपना संशोधन नहीं पेश करता।

(संशोधन नं. 99 से 101 तक पेश नहीं किये गये।)

***श्री के. सन्तानम्** (मद्रास : जनरल): मैं प्रस्ताव करता हूं कि:

खण्ड 22 के उपखण्ड (3) में ''गम्भीर परिस्थिति के उत्पन्न होने पर'' शब्दों के बाद नीचे लिखे शब्द जोड़ दिये जायें:—

''और यूनियन या सम्बन्धित प्रदेश की सरकार के ऐसा घोषित किये जाने पर।''

यह बात स्पष्टत: छूट गई और मुझे आशा है कि यह प्रस्तावक को स्वीकार है। मैं और कुछ नहीं कहना चाहता। मैं यह संशोधन पेश करता हूं।

(संशोधन 103 से 106 तक पेश नहीं किये गये।)

***अध्यक्ष:** केवल एक ही संशोधन पेश किया गया है।

***श्री के.एम. मुंशी** (बम्बई : जनरल): एक संशोधन की सूचना मैंने आज प्रात:काल दी है। वह केवल शाब्दिक संशोधन है, केवल शब्दों का पुनर्विन्यास है। मेरा संशोधन खण्ड 22 के उपखण्ड (1) में थोड़ी-सी असुन्दरता दूर करने मात्र के लिए है। वह खण्ड इस प्रकार है:—

> ''इसका आश्वासन दिया जाता है कि इस भाग के द्वारा जिन अधिकारों का आश्वासन दिया गया है उनको प्रयोग में लाने के लिए, उचित कार्यवाही द्वारा, सर्वोच्च अदालत से दरख्वास्त करने का अधिकार होगा।''

इसमें आश्वासन शब्द दो बार आया है और ऐसा अनुभव होता है कि यह सुन्दर शब्दावली नहीं है, इसलिए मैं निम्नलिखित संशोधन पेश करता हूं:—

खण्ड 22(1) में ''इस भाग द्वारा जिन अधिकारों का आश्वासन दिया गया है'', शब्दों के बदले ये शब्द रख दिये जायें ''इस भाग में जिन अधिकारों की व्यवस्था की गई है''।

***अध्यक्ष:** खण्ड और दो संशोधनों पर अब बहस की जा सकती है।

***श्री के. सन्तानम्:** मुझे भय है कि खण्ड की जिस रूप में रचना हुई है, वह बहुत दूषित है, और यह उन खण्डों में से एक है जिन पर सावधानी से विचार होने और जिनके दुहराये जाने की जरूरत है। मैं समझता हूं कि यह उन चीजों में से है जिन पर न्याय-सम्बन्धी कमेटी विचार करेगी। मैं चाहता हूं कि यह खण्ड भी उस कमेटी के लिए ही छोड़ दिया जाये। यह इस समय जिस रूप में है उससे उसके गलत अर्थ लगाये जा सकते हैं, जिसका परिणाम गंभीर होगा। उदाहरण के लिए उपखण्ड (1) कहता है—

> ''इसका आश्वासन दिया जाता है कि इस भाग द्वारा जिन अधिकारों का आश्वासन दिया गया है उनको प्रयोग में लाने के लिये, उचित कार्यवाही द्वारा, सर्वोच्च अदालत से दरख्वास्त करने का अधिकार होगा।''

इसका अर्थ सम्भवत: यह लगाया जा सकता है कि सर्वोच्च अदालत को मौलिक अधिकारों द्वारा अधिकृत सभी मामलों में पृथक् मौलिक न्यायाधिकार दिये जायेंगे या इसका यह भी मतलब लगाया जा सकता है कि उसके वे मौलिक न्यायाधिकार भी होंगे जो किसी दूसरी अदालत के हों। मैं डॉ. अम्बेडकर से पूछना चाहूंगा कि इसका क्या अर्थ है—''इसका आश्वासन दिया जाता है कि सर्वोच्च अदालत से दरख्वास्त करने का अधिकार होगा।'' मैं कभी भी सर्वोच्च अदालत में आकर इससे सम्बद्ध किसी भी मामले में दरख्वास्त कर सकता हूं। मौलिक न्यायाधिकार के द्वारा भी यह सम्भव है और अपील के अधिकार द्वारा भी। बात स्पष्ट नहीं है, इसलिए यह ऐसी बात है जो साफ कर दी जानी चाहिए। इस खण्ड के पैराग्राफ (2) में आता है—''दूसरी अदालतों को इस सम्बन्ध में जो अधिकार दिये गये हैं, उनके विपरीत न जाते हुए।'' यहां 'अधिकार' देने वाला कौन है? संघ-व्यवस्थापिका-सभा? या प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभा। मैं समझता हूं विधान का अर्थ लगाने या मौलिक अधिकारों को अमल में लाने के बारे में अदालतों को अधिकार देने का कार्य केवल यूनियन का ही विषय होना चाहिए; प्रदेशों को वह नहीं देना चाहिए, क्योंकि प्रदेश इन मौलिक अधिकारों को दो भिन्न रूप में प्रयोग करके उनको विफल कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, अगर वे कहें कि सभी मौलिक न्यायाधिकार सर्वोच्च अदालत के होंगे, तो साधारण नागरिक बार-बार वहां तक नहीं पहुंच पायेंगे। या अगर वे इन अधिकारों को हाकिमों के सुपुर्द कर दें, तो फिर उस (साधारण नागरिक) को अन्तत: अपील करके ही न्याय प्राप्त हो सकता है, जो बहुत ही विलम्ब का कारण और असुविधामूलक होगा। इसलिए न्यायाधिकार देने का विषय नागरिकों के लिए महत्वपूर्ण है। मैं समझता हूं कि मौलिक अधिकारों को अमल में लाने के सारे मौलिक न्यायाधिकार केवल प्रदेश की हाईकोर्ट को सौंपे जाने चाहिएं। वह न तो निचली अदालतों को दिये जाने चाहिए और न सर्वोच्च अदालत को। हां, प्रादेशिक और संघीय अथवा अन्तर्प्रादेशिक मामलों में इसके विपरीत किया जा सकता है। इसलिए प्रदेशों के हाईकोर्ट इन अधिकारों को क्रियात्मक रूप देने के लिए मुख्य केन्द्र होने चाहिए। मैं समझता हूं यह बात स्पष्ट कर दी

[श्री के. सन्तानम्]

गई होगी, मुझे आशा है कि उसका स्पष्टीकरण हो जायेगा। वर्तमान रूप में यह बहुत ही त्रुटिपूर्ण है और जब यह पुनः विचारार्थ सामने आयेगी तो मैं इस पर आलोचना करने का अपना अधिकार सुरक्षित रखता हूं।

***माननीय सरदार वल्लभ भाई पटेलः** यह ऐसा खण्ड है जो न्याय के उपचार व्यवस्थित करता है। यदि हम मौलिक अधिकारों की व्यवस्था करें तो यह आवश्यक है कि हम उसके उपचार भी व्यवस्थित करें। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि यह अन्य अदालतों या हाईकोर्टों का न्यायाधिकार अपहृत करता है। इससे उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। जब सम्पूर्ण न्यायाधिकार-व्यवस्था पर विचार होगा तो प्रत्येक बात पर ठीक तौर पर—समुचित ढंग से—विचार कर लिया जायेगा। इसलिए श्री सन्तानम् का भय ठीक नहीं है। वह अपना अधिकार सुरक्षित रखते हैं, प्रत्येक ने अपना-अपना अधिकार सुरक्षित कर रखा है; पर यह सुरक्षा अनावश्यक है, क्योंकि सभी बातें विधान-में सम्मिलित करनी हैं और अन्तिम खण्डों में, उन्हें विधान में सम्मिलित करने के पहले, कई बार विचार कर लिया जायेगा। इस तरह का भय करने का कोई कारण नहीं है। इसलिए मैं प्रस्ताव करता हूं कि खण्ड को प्रस्तावित संशोधनों सहित स्वीकार किया जाये। मैं दोनों संशोधनों को स्वीकार करता हूं।

***अध्यक्षः** प्रस्तावक महाशय, दो संशोधन स्वीकार करने को तैयार हैं—एक श्री सन्तानम् का और दूसरा श्री मुंशी का।

खण्ड संशोधनों सहित स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** खण्ड 23।

खण्ड 23—वैधानिक उपचारों के अधिकार

***माननीय सरदार वल्लभ भाई पटेलः** मैं खण्ड 23 पेश करता हूं।

''यूनियन की धारा-सभा को अधिकार होगा कि वह कानून बनाकर यह तय करे कि वह सशस्त्र सेनाओं के लोगों के सम्बन्ध में, जिन पर सार्वजनिक व्यवस्था सुरक्षित रखने की जिम्मेदारी है, उन अधिकारों में से किसी अधिकार को किस सीमा तक कम कर दे या खत्म कर दे, जिनके बारे में इस भाग में आश्वासन दिया गया है ताकि अनुशासन सुरक्षित रहे और वे अपने कर्त्तव्यों का पालन कर सकें।''

यह ऐसा खण्ड है जिस पर मतभेद नहीं हो सकता और मुझे आशा है कि इसमें कोई संशोधन नहीं होगा। मैं इसे पेश करता हूं।

खण्ड 23 स्वीकार कर लिया गया।

अध्यक्षः खण्ड 24।

खण्ड 24—वैधानिक उपचारों के अधिकार

***माननीय सरदार वल्लभ भाई पटेलः** श्रीमान् मैं खण्ड 24 पेश करता हूं।

''यूनियन की धारा-सभा इस भाग के उन आदेशों को प्रयोग में लाने के लिए, जिनके सम्बन्ध में कानून बनाने की आवश्यकता है और उन कामों के लिये सजा नियत करने के लिये, जो इस भाग में अपराध घोषित किये गये हैं और जिनके लिये सजा नहीं दी जा सकती है, कानून बनायेगी।''

यह खण्ड परिणामस्वरूप है, इसलिये मुझे आशा है इसमें संशोधन नहीं होगा। मैं सभा से इसे स्वीकार करने को कहता हूं।

खण्ड 24 स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** अब दो खण्ड ऐसे हैं जिन्हें पांच आदमियों की एक कमेटी के हवाले किया गया थे। अब हम उन्हें एक-एक करके ले सकते हैं। नया खण्ड 3 अब पेश किया जा सकता है।

***श्री के.एम. मुंशीः** मेरा प्रस्ताव है कि नीचे लिखा खण्ड मौलिक खण्ड 3 की जगह रखा जायेः

''हर एक ऐसा व्यक्ति जिसका जन्म यूनियन की सीमा के अन्दर हुआ हो और जो उसकी अधिकार-सीमा में हो, हर एक ऐसा व्यक्ति, जिसके मां-बाप में से कोई भी उसके जन्म के समय यूनियन का नागरिक हो और हर एक ऐसा व्यक्ति, जिसे कानून के अनुसार नागरिक बना लिया गया हो, यूनियन का नागरिक समझा जायेगा।

यूनियन की नागरिकता प्राप्त करने और उसको खत्म करने के बारे में अन्य व्यवस्था यूनियन के कानून द्वारा की जा सकेगी।''

इसके कारण तत्सम्बन्धी कमेटी की रिपोर्ट में पूर्णतः दिये जा चुके हैं। मैं उसमें कुछ और नहीं जोड़ना चाहता।

***श्री के. सन्तानम्ः** श्रीमान्, मेरा यह प्रस्ताव है कि इस खण्ड के पहले पैराग्राफ के अन्त में यह जोड़ दिया जायेः—

''हर एक ऐसा व्यक्ति जो यूनियन के समारम्भ के पहले भारत में पैदा हुआ हो या उसका नागरिक हो गया हो और उसकी अधिकार-सीमा के अन्तर्गत हो, यूनियन का नागरिक समझा जायेगा।''

इस संशोधन की आवश्यकता केवल यह है—आप ऐसे लोगों को नागरिकता के अधिकार दे रहे हैं जो आगे पैदा होने वाले हैं या उस दिन पैदा हों जिस दिन यूनियन अस्तित्व में आये। इसका यह अर्थ हुआ कि यदि हम यूनियन की सीमा के अन्दर नहीं पैदा हुए हैं तो हम वहां के नागरिक नहीं हो सकते। मैंने सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर से परामर्श किया है इस खण्ड में तो केवल वह व्यक्ति आते हैं जो यूनियन के अस्तित्व में आने के समय वहां के जन्मजात नागरिक हों। मंत्रि-प्रतिनिधि-मंडल की योजना में, यूनियन का क्षेत्र भारत की सीमा के अन्तर्गत माना गया है। ऐसी अवस्था में मेरा संशोधन आवश्यक नहीं भी हो

[श्री के. सन्तानम्]

सकता। पर इस बात की सम्भावना है कि यूनियन का सीमा-क्षेत्र वर्तमान क्षेत्र से बहुत छोटा हो जाये। मान लीजिये यूनियन में कोई ऐसा व्यक्ति है जो सिन्ध में पैदा हुआ था; इस परिभाषा के अनुसार वह यूनियन का नागरिक नहीं होगा। वह विदेशी हो जायेगा। क्या आप ऐसे परिणाम को घटित होने देना चाहते हैं? मैं यह कहना चाहता हूं कि यूनियन के आरम्भ में जो कोई भी भारत में पैदा हुआ हो और जो यूनियन की अधिकार-सीमा का प्रजाजन है, यूनियन का नागरिक होगा। जब यूनियन अस्तित्व में आ चुकेगी तो मुझे इस खण्ड पर कोई आपत्ति न होगी। इसलिए यह एक बुनियादी बात है। मुझे आशा है कि इस पर अच्छी तरह विचार होगा और या तो इस रूप में अथवा किसी और ढंग पर इस आशय की व्यवस्था की जायेगी कि जो यूनियन के आरम्भ काल में भारत के नागरिक थे, उनके प्रति नागरिकों का-सा व्यवहार किया जायेगा और वे केवल इसलिये नागरिकता से नहीं वंचित किये जायेंगे कि वे प्रस्तावित नियम की विस्तार-सीमा से बाहर के क्षेत्र में पैदा हुए थे।

*__माननीय सरदार वल्लभ भाई पटेल:__ इस समय ऐसे प्रश्नों पर विचार करना आवश्यक नहीं है। इस समय इस संघ में रहने वालों को नागरिक अधिकार देने की व्यवस्था कर रहे हैं। कोई भी इस समय यह नहीं बता सकता कि जब विधान का अन्तिम रूप प्रस्तुत होगा तो स्थित क्या होगी। इस समय कोई यह बात नहीं कह सकता कि भारत का कोई भाग उससे पृथक् होने जा रहा है या नहीं। जब अन्तिम स्थिति आ जायेगी तो हम विचार कर सकेंगे कि अगर इस देश में विभाजन होना ही है तो उन भागों का पारस्परिक समन्वय किस प्रकार होगा। इस समय उस पर विचार करना अनावश्यक है। मुझे आशा है कि प्रस्तावक अपना संशोधन वापस ले लेंगे।

*__श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर__ (मद्रास : जनरल): पर जो लोग यूनियन में पैदा हुए होंगे उनका क्या होगा?

*__माननीय सरदार वल्लभ भाई पटेल:__ जब विधान पास हो जायेगा तो आप यूनियन में पैदा हुए माने जायेंगे।

*__माननीय श्री सी. राजगोपालाचार्य__ (मद्रास : जनरल): जिस विषय पर विचार हो रहा है वह वैसा आसान या उपहासास्पद नहीं है जैसा कि सोचा गया है।

यूनियन में सुनिश्चित क्षेत्र सम्मिलित होंगे। उसमें सारा भारत नहीं भी हो सकता, केवल कुछ भाग भी हो सकते हैं। हमें यह स्वीकार कर लेना चाहिए। मैं एक ठोस उदाहरण दूंगा। मान लीजिए कि मैं मैसूर में पैदा हुआ था। मैं मैसूरी हूं। मैसूर संघ में सम्मिलित नहीं होता। हमें इस रूप में विचार करना चाहिए। फिर तो मैं किसी भी खण्ड और कानूनी शब्द-निर्माण से यूनियन में पैदा हुआ नहीं समझा जाऊंगा। इसलिए यह सुझाव पेश किया गया है कि भारत के किसी भी

प्रांत में यूनियन के आरम्भ काल में पैदा हुआ कोई भी आदमी, लम्बे समय तक संघ-सीमा में रहने पर नागरिक बन जायेगा।

यह बड़ा ही सारपूर्ण प्रश्न है। सम्भवत: इस श्रेणी के अन्तर्गत वर्तमान जनसंख्या का बहुत-सा भाग आ जायेगा, जो भारतीय यूनियन बनते ही उसका नागरिक अपने आप बन जायेगा। यह केवल अर्थ लगाने या व्याख्या करने पर ही निर्भर नहीं है। इसकी व्यवस्था आवश्यक है। इस पर विचार करके इसे सम्मिलित कर लेने की जरूरत है।

***श्री आर.के. सिधवा:** श्रीमान्, जैसा कि श्री संतानम् ने कहा है यदि स्थिति ज्यों-की-त्यों रहने दी जाती है, तो इस खण्ड द्वारा कितने ही व्यक्ति, जो यूनियन में पैदा हुए, नागरिकता के अधिकार से वंचित रह जायेंगे। इसकी परिभाषा बाद में की जायेगी। मेरा ख्याल है कि इस यूनियन में भारत के सभी भाग आ जायेंगे, पर जो लोग यूनियन के नागरिक अधिकारों से वंचित हो जायेंगे उनकी कानूनी स्थिति क्या होगी? मैं सिन्ध में पैदा हुआ हूं। मान लीजिए सिंध यूनियन का भाग नहीं बनता तो मेरी क्या स्थिति होगी? क्या मैं यूनियन की नागरिकता के अधिकार से वंचित हो जाऊंगा। यह एक ऐसी बात है जिस पर बाद में विचार करना है। जैसा कि मैंने उस दिन कहा था कि नागरिकता का अधिकार मौलिक अधिकारों में से है। जो विदेशी भारत में अपने मतलब और स्वार्थ से आयेंगे, वह नागरिकता का अधिकार प्राप्त करने के लिए प्रार्थना-पत्र भेज सकते हैं और वह उन्हें शीघ्र मिल भी सकता है, जबकि भारत में पैदा हुए लोग नुकसान में रहेंगे। विदेशियों के लिए दस वर्ष का समय रख दिया जाना चाहिए। यदि राज्य को यह विश्वास हो जाये कि भारत में उन विदेशियों का कुछ माल-मत्ता है तो उन्हें नागरिकता का अधिकार दिया जा सकता है। कल इस सभा-भवन में इस बात पर कई घंटे तक वाद-विवाद हुआ है। हम इस बात पर मामूली तौर से विचार नहीं करना चाहते थे, हम इसे गम्भीर विचार का विषय बनाना चाहते थे, और महाशय, आपने उन लोगों को, जिनका हमसे मत-भेद है, यह समझाने की कृपा की कि यह बात उपेक्षणीय नहीं है क्योंकि तथ्य यह है कि सभी को इस देश का नागरिक बनने का अधिकार होना चाहिए। आखिर, हम यूनियन में रहना चाहते हैं। हम यह नहीं भूल सकते कि हम हिंदुस्तानी हैं, और हमारा इस देश में जन्म हुआ है। यदि भारत के टुकड़े होते हैं, तो हमें नागरिकता के क्या नियम बनाने हैं? महाशय, मैं समझता हूं कि जो लोग यूनियन की स्थापना के पहले पैदा हुए थे उन्हें पूरा आश्वासन मिलना चाहिए कि वे यूनियन के नागरिक हैं और उन्हें उसके अधिकार से वंचित नहीं किया जायेगा।

इसके बाद यहां नागरिकता का अधिकार प्राप्त करने के बारे में विचार करना है। कोई भी व्यक्ति, जो विदेशों से आकर अपने व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए—अपने निजी लाभ के लिए आता है, उसे सिर्फ यही कहना पड़ेगा कि—"मैं यहां का नागरिक होना चाहता हूं"। और वह यूनियन का नागरिक हो जायेगा मैं भारत में

[श्री आर.के. सिधवा]

पैदा हुआ हूं और मैं इस देश की नागरिकता से वंचित होने जा रहा हूं, परन्तु एक विदेशी तो केवल यह घोषित करने के लिए कि वह इस देश का नागरिक होना चाहता है, नागरिकता के सभी अधिकार प्राप्त कर लेता है।

इस खण्ड के निर्माताओं के प्रति आदर-भाव रखते हुए भी, मैं यह नहीं समझता कि इस मामले पर पूर्णत: विचार किया गया है, यद्यपि यह कहा गया है कि ''यूनियन की नागरिकता प्राप्त करने और उसे खत्म करने के बारे में यूनियन का कानून आगे व्यवस्था करेगा''। मैं नहीं चाहता कि कोई कानून मेरी नागरिकता के लिए व्यवस्था करे। इसलिए मैं चाहता हूं कि इस पर यहां वाद-विवाद हो।

***दीवान बहादुर सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर** (मद्रास : जनरल): मैं समझता हूं कि श्री संतानम् की बात में कुछ जोर है। महाशय, हमें यह मानना होगा कि कमेटी में हमने इस प्रश्न पर विचार नहीं किया जो इस समय सभा के सामने उपस्थित है, पर एक बारगी संशोधन पेश करना भी बुद्धिमानी न होगी। यदि कोई व्यक्ति भारत का निवासी है और वह यूनियन के अस्तित्व में आने के बाद यहां अपना निवास-स्थान बनाता है, तो ऐसी अवस्था में वह नागरिकता के अधिकार प्राप्त कर सकता है। केवल इस कारण कि वह संयोगवश भारत या ब्रिटिश भारत में पैदा हुआ था, यूनियन में नहीं, उसे नागरिकता का अधिकार नहीं मिल सकता। हमें इस खण्ड में और शर्तें जोड़कर कहना पड़ सकता है कि ऐसे लोगों को भारतीय यूनियन में अपना स्थायी निवास-स्थान बनाना होगा।

जहां तक ''यूनियन में पैदा हुआ हो'' शब्दों का सम्बन्ध है, मैं नहीं समझता कि इससे कोई कठिनाई पैदा होगी। यूनियन उस जगह भौगोलिक अर्थ में नहीं रखा गया है, और न राजनीतिक अर्थ में ही। किसी राजनीतिक प्रदेश में कोई पैदा भी नहीं हो सकता। ''यूनियन में पैदा हुआ हो'' का अर्थ है कि ''संघ की सीमा के अन्दर पैदा हुआ होगा।''

श्री सन्तानम् की आपत्ति कुछ सार-युक्त है। हम सहसा किसी को नागरिक अधिकारों से वंचित नहीं करना चाहते—देशी राज्यों में कैसे प्रसिद्ध लोग पैदा हुए हैं और वह ब्रिटिश भारत में आ बसे हैं, इसलिए जहां तक उस विशिष्ट श्रेणी का सम्बन्ध है, हम किसी समुचित उपाय पर विचार कर सकते हैं। हम भारत के किसी भी भाग में पैदा हुए प्रत्येक व्यक्ति को नागरिकता का अधिकार देने की स्थिति में नहीं भी हो सकते हैं। मान लीजिए कुछ देशी राज्य यूनियन के बाहर ही रहना चाहते हैं। हमें विचार करना होगा कि इन राज्यों के निवासियों को हम नागरिकता के अधिकार दें या नहीं दें। इसलिए हम इस पर ध्यानपूर्वक विचार करेंगे और एक समुचित खण्ड रखेंगे। कमेटी में—जिसका सदस्य मैं भी हूं और डॉ. अम्बेडकर भी हैं—इस विशेष पेचीदगी पर विचार नहीं किया गया जो आगे खड़ी हो सकती है। मैं समझता हूं कि हमें एकाएक संशोधन करने की शीघ्रता न करनी चाहिए।

पर जहां तक सामान्य सिद्धान्त का सम्बन्ध है, उसमें कोई अपवाद नहीं हो सकता। ''हर एक ऐसा व्यक्ति, जिसका जन्म यूनियन की सीमा के अन्दर हुआ हो और जो उसकी अधिकार-सीमा में हो, हर एक ऐसा व्यक्ति जिसके मां-बाप में से कोई भी उसके जन्म के समय यूनियन का नागरिक हो और हर एक ऐसा व्यक्ति, जिसे कानून के अनुसार नागरिक बना लिया गया हो'' इस भाग का जहां तक सम्बन्ध है, कोई अपवाद नहीं हो सकता। इसके सभी पहलुओं पर कमेटी में विचार हुआ था। जिस विशिष्ट श्रेणी के लोगों का श्री संतानम् ने जिक्र किया है, उस पर पृथक् विचार करके उसकी व्यवस्था करनी होगी। यह समझकर कि इस श्रेणी के लोगों के बारे में व्यवस्था की जायेगी, यह खण्ड पास किया जाना चाहिए या सारे खण्ड को अलग रखने में भी मुझे कोई आपत्ति नहीं है। पर जहां तक मुख्य सिद्धान्त का सम्बन्ध है, हम सभी सहमत हैं और उसमें मतभेद नहीं है। इस सभा द्वारा नियुक्त कमेटी ने इस बात पर पूर्णत: बहस कर ली थी और हम सर्वसम्मति से इस परिणाम पर पहुंचे थे कि यह स्वीकार किया जाना चाहिए।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** मैं सर अल्लादी से सहमत नहीं हूं। उनका कथन है कि यूनियन का अर्थ है यूनियन की सीमा। इस खण्ड में कहा गया है—''उसकी अधिकार-सीमा में''। इसका मतलब अधिकार-सीमा से है या वहां की सरकार से? केवल सीमा ही काफी नहीं है। इसलिए मैं तो सभा से अनुरोध करूंगा कि इस खण्ड को विशेष-समिति के पास पुनर्विचार के लिए भेजना चाहिए।

***दीवान बहादुर सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** हम भेजने और फिर भेजने का काम तो कर सकते हैं, पर मैं नहीं समझता कि कमेटी इस पर और प्रकाश डाल सकती है। यदि किसी और श्रेणी के लिए व्यवस्था करनी है तो हम कर सकते हैं। मैं तो खण्ड को कमेटी के पास भेजने के सुझाव का जवाब दे रहा हूं। मैं यह कह रहा था कि यह खण्ड फिर उस कमेटी के पास भेजना उचित नहीं है। यह एक राजनीतिक प्रश्न है—कानूनी नहीं। हमें इस विषय में कोई निष्कर्ष निकालना है। हम कमेटी की सहायता पाने के लिए चिन्तित थे जिससे हम यह निश्चय कर सकें कि जातीयता का आधार 'जन्म' द्वारा निर्णीत होगा या नहीं और उस कमेटी ने अपनी राय दे दी है। इस सभा की कमेटियों को हम ऐसे विषय कितनी ही बार समर्पित और पुनर्समर्पित कर सकते हैं। जिस कमेटी ने इस खण्ड पर विचार किया है उसमें इस सभा के सदस्य सम्मिलित थे और कुछ ऐसे लोग भी थे जो इस सभा के सदस्य नहीं हैं। ऐसी स्थिति में मैं कहूंगा कि हमें इस सभा के सदस्यों और इस कमेटी के सभापति से सहायता मिल चुकी है। मैं नहीं समझता कि कमेटी के प्रति यह न्याय होगा कि उसे फिर यह खण्ड इस तरह लौटा दिया जाये। मानो उन्होंने इसके किसी खास पहलू पर विचार ही नहीं किया हो। यह एक नया प्रश्न है जो कमेटी के सामने आयेगा और हमें

[दीवान बहादुर सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

इस पर अच्छी तरह विचार कर लेना चाहिए। और अगली बैठक के पहले खास श्रेणी के लोगों के लिए व्यवस्था करने में कठिनाई नहीं होगी। यह सामान्य सिद्धान्त पास किया जा सकता है और दूसरा खण्ड बाद में लाया जा सकता है, या फिर सारा ही खण्ड बाद के लिए रखा जा सकता है। मैं किसी एक सिद्धान्त या दूसरे सिद्धांत का अनुगामी नहीं हूं, पर यह बात स्पष्ट रूप से समझ लेनी चाहिए कि जहां तक मूल सिद्धान्त का सम्बन्ध है, हम उस कमेटी की सिफारिशों को स्वीकार करते हैं। जिसका सभापतित्व एक विख्यात विधान-विशेषज्ञ ने किया था।

*माननीय श्री सी. राजगोपालाचार्य: महाशय, मुझे अफसोस है कि वाद-विवाद ऐसी दिशा में चला गया जिससे कुछ भ्रम-सा उत्पन्न हो रहा है। मैं चाहता हूं कि हमारा ध्यान उन महत्वपूर्ण और राजनीतिक दृष्टि से निर्विवाद विषय की ओर लगना चाहिए कि भारत में आज कितने ही लोग ऐसे हैं जो यूनियन की अधिकार सीमा में आ जायेंगे, चाहे वह कैसा ही नियंत्रित और छोटा क्यों न हो—जो भारत के अन्य भागों में पैदा हुये थे और जो इन क्षेत्रों में बसे हैं, जो संघ के अन्तर्गत आने वाले हैं, सभी संघ के नागरिक बन जायेंगे। वर्तमान व्यवस्था में वह श्रेणी नहीं आ सकेगी जो बहुत से लोगों से बनी है, पर यह जान-बूझकर नहीं, अनिच्छापूर्वक ही होगा। इसीलिए इस व्यवस्था में संशोधन करना होगा। इसमें संशोधन इस प्रकार किया जाना चाहिए जिससे उन बहुत से लोगों को नागरिक अधिकार स्वत: प्राप्त हो जायें जो भारत के विभिन्न भागों में पैदा हुए हैं और जो बाद में यूनियन के क्षेत्र के पुराने और स्थायी निवासी बन जायेंगे। इस तरह उन्हें पृथक् रखना तो बिल्कुल ही अनैच्छिक और बुरा होगा। इसलिए इस खंड में संशोधन करना ही होगा। मेरा विश्वास है कि इसमें संशोधन हो सकता है और अगर सर अल्लादी और डाक्टर अम्बेडकर इस पर ध्यान दें तो पन्द्रह मिनट के अन्दर ही हो सकता है; पर यदि इसे कठिन समझा जाये, तो सारा खंड वापस भेजा जाना चाहिए, क्योंकि यदि हम इस तरह गम्भीरतापूर्वक एक खंड विधान-परिषद् में पास कर लेते हैं, तो बाद में इसमें बिना रस्मी कार्यवाही के और कुछ नहीं जोड़ा जा सकेगा। मेरी राय है कि इस पर विचार-स्थगित किया जाये। सर अल्लादी और डाक्टर अम्बेडकर आज मिलकर इस पर विचार-विनिमय करने के बाद इसे कुछ ही मिनटों में समाप्त कर सकते हैं। यदि वे ऐसा नहीं समझते तो, वे जितना चाहें समय ले लें, पर इसको तुच्छ समझकर इसकी उपेक्षा न की जाये। यह ऐसा महान् विषय है कि इसे इस तरह टाला नहीं जा सकता।

*श्री के.एम. मुंशी: कोई थोड़े समय के लिए भी यह नहीं कह सकता कि यह महत्वपूर्ण विषय नहीं है। कमेटी ने इस पर विचार नहीं किया, पर जब मूल मसविदा रखा गया तो मेरे मस्तिष्क में इन कठिनाई का ध्यान था, पर सर अल्लादी ने बहुत ठीक कहा है कि यह सवाल केवल मौलिक अधिकारों का नहीं है। यह

ऐसा प्रश्न है जिसका निर्णय भविष्य में तत्कालीन राजनीतिक स्थिति को ध्यान में रखते हुये विधान का अन्तिम मसविदा तैयार करते समय होगा। निश्चय ही संशोधन पेश कर देना बहुत आसान है, पर हम आज यह नहीं जानते कि यूनियन की सीमा के बारे में आगे क्या होने वाला है—इसमें सारा भारत सम्मिलित होने जा रहा है, या कुछ भाग विरोधी बनने जा रहा है। दूसरा विचारणीय प्रश्न यह है कि यूनियन में पैदा हुए लोग जो भारत के अन्य भागों में रहते हैं, उन्हें उन क्षेत्रों में नागरिकता के अधिकार मिलेंगे या नहीं। मैसूर का एक उदाहरण दिया गया था। मैं अपने को उसी तक सीमित रखूंगा। मान लीजिए मैसूर यूनियन के बाहर रहता है और ऐसा कानून बनाता है कि भारत के किसी भी भाग में पैदा हुआ कोई भी हिन्दुस्तानी मैसूर में आजन्म रहकर भी नागरिक नहीं बन सकता। इस सभा को ऐसे पेचीदे प्रश्नों पर केवल मौलिक अधिकार के रूप में नहीं, बल्कि उस राजनीतिक स्थिति के आधार पर विचार करना चाहिए जो इसको अन्तिम रूप में पास करते समय हमारे सामने होगी। यह मौलिक अधिकार जैसा प्रस्तुत किया गया है वह न्यूनातिन्यून रूप में और मूल-मात्र है। आज की परिवर्तित स्थिति ऐसी है कि आप इस खंड पर सम्भवतः कोई संशोधन नहीं कर सकते। इसलिए हमें देखना है इस समय से तब तक कैसी राजनीतिक स्थिति रहेगी, जब स्थिति पर अन्तिम विचार होगा। उस समय हम ऐसी समुचित व्यवस्था कर सकेंगे जिसे मौलिक अधिकारों में या अन्यत्र सुविधाजनक स्थान मिल सकेगा। कहा गया है कि इसके बाद बहुत से मौलिक अधिकारों पर विचार किया जाने वाला है। यह भी कहा गया है कि यह आरम्भिक मसविदा है और इसके बाद जैसी भी स्थिति होगी उस पर विचार किया जायेगा, इसलिए मेरा निवेदन है कि हमें इस खण्ड को ज्यों को त्यों स्वीकार कर लेना चाहिए और भी संतानम् का संशोधन अन्य संशोधनों के साथ एडवाइजरी कमेटी के हवाले कर देना चाहिए जिससे प्रश्न का एक समुचित स्वरूप सभा के सम्मुख फिर आ सके।

***डॉ. बी.आर. अम्बेडकर** (बंगाल : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे विचार में इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है कि श्री संतानम् ने जो प्रश्न उठाया है वह बहुत महत्व का है और हमें इस विषय पर विचार करना है। जो कठिनाई उत्पन्न हुई है वह कमेटी के तैयार किये हुए खण्ड के पहले ही वाक्य को देखने से स्पष्ट हो जाती है। उसमें कहा गया है, ''हर एक व्यक्ति, जो यूनियन में पैदा हुआ हो'' स्पष्टतः इसका संकेत भविष्य की ओर है, यानी उनकी ओर जो यूनियन की स्थापना के बाद यूनियन के अन्दर पैदा होंगे। प्रश्न यह है, उन लोगों की स्थिति क्या होगी जो भारत में पैदा हुए हों परन्तु जो यूनियन की स्थापना के पहले पैदा हो गये हों? मेरे विचार में इस सम्बन्ध में व्यवस्था करने के लिये हमें एक खण्ड रखना होगा, मैं कोई संशोधन पेश नहीं कर रहा हूं बल्कि एक सुझाव रख रहा हूं, इस खण्ड को बहुत कुछ इस प्रकार रखना होगा:

[डा. बी.आर. अम्बेडकर]

''सभी ऐसे लोग, जिनका जन्म भारत में हुआ हो और जिनकी परिभाषा जनरल क्लाजेज एक्ट में दी हुई है, तथा जो यूनियन के अन्दर रहते हों और उसकी अधिकार सीमा में हों, यूनियन के नागरिक समझे जायेंगे।''

मेरे विचार में इस प्रकार का एक खण्ड आवश्यक है और इसके अन्तर्गत वे सभी लोग आयेंगे जो भारत में पैदा हुए हों और जो यूनियन की स्थापना के समय उसकी प्रजा हो इस खण्ड के बिना बहुत-से लोग बड़ी कठिनाई में पड़ जायेंगे और उनकी जातीयता कुछ भी न रहेगी। इसलिये मैं यह सुझाव पेश करता हूं और सरदार वल्लभ भाई पटेल को यह राय देता हूं कि यह उचित ही है कि सारा खण्ड पुनर्विचार के लिये वापस भेजा जाये। मेरी राय में यह एक गंभीर विषय है।

***अध्यक्षः** एक सुझाव पेश किया गया है कि सारा खण्ड अधिक विचार करने के लिए स्थगित किया जाये।

***श्री आर.के. सिधवाः** इस विषय का सम्बन्ध केवल वकीलों से नहीं है। इसका सभी साधारण लोगों से सम्बन्ध है।

***अध्यक्षः** एडवाइजरी कमेटी (परामर्श-समिति) इस पर स्वतंत्र रूप से विचार कर सकेगी और अगर वह ऐसा समझेगी तो अगली बैठक में अपने सुझाव पेश करेगी।

क्या मैं यह समझूं कि सभा इस खण्ड को पुनर्विचार के लिए स्थगित करती है?

***अनेक माननीय सदस्यः** जी हां।

***अध्यक्षः** तो इसे स्थगित किया जाता है। अब हम खण्ड 11 लेते हैं।

***श्री के.एम. मुंशीः** यह खण्ड जो उस कमेटी से निकल चुका है, जिसके हवाले यह किया गया था, इस प्रकार हैः—

''मनुष्यों का व्यापार और बेगार और इसी प्रकार दूसरी तरह बलपूर्वक काम लेने की आज्ञा नहीं है और इस निषेध का किसी प्रकार भी उल्लंघन किया जाना अपराध समझा जायेगा।''

इसकी जो व्याख्या रोक दी गई थी वह कमेटी की दृष्टि में आवश्यक है ताकि ''बलपूर्वक काम लेने'' का कोई विवाद-ग्रस्त अर्थ न लगाया जाये। इसकी व्याख्या के बारे में सभा के कई भागों में मतभेद था और यह रिपोर्ट केवल आज प्रातःकाल सभा के सामने रखी गई है, इसलिए मेरा निवेदन है कि यह उचित ही होगा कि यह खण्ड भी हमारी अगली बैठक तक के लिए स्थगित किया जाये, क्योंकि मेरा विश्वास है कि कुछ सदस्य संशोधन पेश करना चाहेंगें। इसलिए मैं समझता हूं कि इस खण्ड पर आज विचार न किया जाये। यह भी स्थगित रखा जाना चाहिए।

***अध्यक्षः** तो पेश करने के बदले आप इसे स्थगित रखना चाहते हैं?

***श्री के.एम. मुंशीः** जी हां।

***अध्यक्षः** क्या सभा यह चाहती है कि यह खण्ड भी स्थगित किया जाये।

***अनेक माननीय सदस्यः** जी हां।

***अध्यक्षः** यह स्थगित किया जाता है।

हमारे पास अनेक नये प्रस्ताव हैं जो कुछ सदस्य संशोधन के रूप में पेश करना चाहते थे, और इस सभा द्वारा निश्चय किया गया था कि खण्डों की समाप्ति के बाद उन्हें लिया जायेगा। हमारे पास कितने ही ऐसे खण्ड हैं जिन पर विचार नहीं किया जा सका है। मैं नहीं समझता कि सभा इन पर किस रूप में विचार करना चाहेगी।

***सेठ गोविन्ददास** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): मेरा प्रस्ताव है कि ये सभी खण्ड एडवाइजरी कमेटी को सौंप दिये जाएं जिससे वह कमेटी पहले इन पर विचार कर ले और तब इन्हें इस सभा के सामने लाया जाये।

***अध्यक्षः** सेठ गोविन्ददास ने यह सुझाव पेश किया है कि ये खण्ड विचारार्थ एडवाइजरी कमेटी को सौंप दिये जायें और फिर ये कमेटी की रिपोर्ट के साथ यहां पेश हों। क्या मैं यह समझूं कि सभा की यह इच्छा है कि ये खण्ड एडवाइजरी कमेटी को सौंपे जायें?

***अनेक माननीय सदस्यः** जी हां।

***अध्यक्षः** यह सब खण्ड एडवाइजरी कमेटी को सौंपे जाते हैं।

***श्री आर.के. सिधवाः** महाशय, एडवाइजरी कमेटी के सभापति की रिपोर्ट का पैराग्राफ 9 इस प्रकार है:

> ''फंडामेन्टल राइट्स सब-कमेटी और माइनोरिटीज सब-कमेटी इस बात पर सहमत थी कि मौलिक अधिकारों में निम्नलिखित भी सम्मिलित किया जाये:—
>
> '21 वर्ष या उससे अधिक अवस्था का प्रत्येक नागरिक किसी भी चुनाव में वोट दे सकेगा,..........
>
> ''इस खण्ड से सिद्धान्ततः सहमत होते हुए भी, हम सिफारिश करते हैं कि इन्हें मौलिक अधिकारों में सम्मिलित करने के बदले विधान के किसी अन्य भाग में स्थान मिलना चाहिए।''

सभा की इस सम्बन्ध में राय लेनी होगी कि वह इस खण्ड को मौलिक अधिकारों में रखने के पक्ष में है या इसे विधान का एक अंग बनाना चाहती है। इस प्रश्न पर यहां वाद-विवाद और निश्चय होने की जरूरत है। अन्यथा एडवाइजरी कमेटी के सभापति की उस रिपोर्ट के नवें पैराग्राफ का क्या प्रभाव जो आपके पास भेजा जा चुका है? क्या यह स्वतः विधान में आ जाता है?

[श्री आर.के. सिधवा]

एडवाइजरी कमेटी के सभापति ने इस पैराग्राफ के द्वारा यह जानना चाहा था कि सभा की क्या राय है?

***अध्यक्ष:** आपका सुझाव क्या है? क्या आप कोई प्रस्ताव रख रहे हैं?

***श्री आर.के. सिधवा:** मुझे इस खण्ड के विधान में सम्मिलित किये जाने में कोई आपत्ति नहीं है।

***अध्यक्ष:** आपका सुझाव क्या है? इसे विधान में सम्मिलित किया जाना चाहिए या नहीं?

***श्री आर.के. सिधवा:** इसे विधान में सम्मिलित किया जाना चाहिए।

***माननीय सरदार वल्लभ भाई पटेल:** हम रिपोर्ट में यह कह चुके हैं कि ''इस खण्ड से सिद्धान्तत: सहमत होते हुए भी हम सिफारिश करते हैं कि इसे मौलिक अधिकारों में सम्मिलित करने के बदले, विधान के किसी अन्य भाग में स्थान मिलना चाहिये।''

***अध्यक्ष:** कमेटी की यही रिपोर्ट है और सभा को रिपोर्ट के इसी हिस्से पर विचार प्रकट करना है। इसीलिये मैंने श्री सिधवा से पूछा कि क्या इसे स्वीकार किया जाना चाहिए और इसे विधान के किसी अन्य भाग में स्थान देना चाहिए।

***श्री आर.के. सिधवा:** मैंने कह दिया कि उसे विधान में सम्मिलित किया जाना चाहिए।

***अध्यक्ष:** श्री सिधवा का प्रस्ताव है कि वह पैराग्राफ स्वीकार किया जाना चाहिए। क्या कोई इस पर बोलना चाहते हैं।

(कोई नहीं बोला।)

मैं सभा के सामने रिपोर्ट का नवां पैराग्राफ स्वीकार करने के लिए रखता हूं।

रिपोर्ट का पैराग्राफ 9 स्वीकार कर लिया गया।

***श्री विश्वनाथ दास** (उड़ीसा : जनरल): मैं सभा का ध्यान खण्ड 2 की ओर गम्भीरतापूर्वक आकर्षित करता हूं, जो इस प्रकार है:—

> ''सब ऐसे वर्तमान कानून, विज्ञप्तियां, नियम, रीति या रिवाज जो कि यूनियन के क्षेत्र में प्रयोग में हों और उन अधिकारों के विपरीत हों, जिनके बारे में विधान के इस भाग में आश्वासन दिया गया है। मंसूख समझे जायेंगे।''

इस सम्बन्ध में मैं रिपोर्ट के पैराग्राफ 7 का हवाला देना चाहता हूं जिसमें कहा गया है कि इस खण्ड का वर्तमान धाराओं पर क्या असर पड़ेगा। इस पर विस्तृत विचार करने के लिए उन्हें समय नहीं मिला।

***अध्यक्षः** हम मौलिक अधिकारों के खण्ड 2 पर विचार कर चुके हैं।

***श्री विश्वनाथ दासः** मैं इस खण्ड पर पुनर्विचार करने के लिए नहीं कह रहा हूं। मैं तो केवल इस बात का हवाला दे रहा हूं जो खण्ड 2 की स्वीकृति से पैदा होती है। मैं यह सुझाने जा रहा हूं कि खण्ड 2 के स्वीकार किये जाने पर आगे क्या करना जरूरी होगा। इसके गूढ़ार्थ को अच्छी तरह समझ लेने की जरूरत इसलिए है कि स्थानीय (प्रांतीय) और भारतीय कानूनों और नियमों में मौलिक अधिकार को स्वीकार करने के परिणामस्वरूप कितनी ही रद्दो-बदल करनी होगी। इसका निरीक्षण या तो भारत-सरकार प्रांतीय सरकारों के साथ मिलकर कर सकती है, या इस सभा द्वारा नियोजित कमेटी कर सकती है। यह बड़े दुर्भाग्य की बात है कि एजेन्डा कमेटी इस प्रश्न पर विचार नहीं कर सकी, क्योंकि यह हमारे सम्मुख नहीं था। ऐसी परिस्थिति में मैं यह राय देना चाहूंगा कि हमारे लिए इस प्रश्न पर ध्यान देना आवश्यक है और इस प्रश्न की गूढ़ता को अगली बैठक के पहले समझ लेना जरूरी है। जब तक हम यह न समझ लें कि कानून और नियम किस हद तक रद्द होंगे तब तक इस सभा के लिए यह सम्भव नहीं होगा कि वह इसके गूढ़ार्थ को पूर्णतः समझ सके और विधान में अस्थायी व्यवस्था जोड़ सके। मैं इन खास परिस्थतियों का हवाला दे रहा हूं जो खण्ड 2 की स्वीकृति से उत्पन्न होंगी और यह सुझाव पेश कर रहा हूं।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं आप रिपोर्ट के पैराग्राफ 7 के अंतिम वाक्य का हवाला दे रहे हैं, जो इस प्रकार हैः—

> ''हमारी सिफारिश है कि इस खण्ड को विधान में सम्मिलित करने के पहले इस प्रकार की जांच की आवश्यकता है।''

यह स्वीकार किया गया है। हम सुझाव के अनुसार जांच करने जा रहे हैं।

***श्री एच.वी. कामतः** मेरी राय है कि इसे बहुत शीघ्र आरम्भ कर देना चाहिए, जिससे इसके गूढ़ार्थ के बारे में रिपोर्ट शीघ्र सामने आ जाये।

***अध्यक्षः** जब सभा ने इसे स्वीकार कर लिया है तो इसका मतलब यह है कि कार्यवाही की जायेगी।

***श्री एच.वी. कामतः** यह खण्ड कमेटी के पास कैसे जायेंगे?

***अध्यक्षः** वे जिस रूप में हैं वैसे ही जायेंगे। सेक्रेटेरियट उन्हें एडवाइजरी कमेटी को सौंप देगा।

एक दो बातें ऐसी हैं जिनके बारे में मैं कुछ कहना चाहता हूं। माननीय सदस्यों को याद होगा कि भाषाओं एवं संस्कृति के आधार पर प्रान्तों के निर्माण के लिए प्रस्ताव पेश करने की सूचनाएं कई सदस्यों द्वारा दी गई थी; पर पिछली बैठक में वे प्रस्ताव स्थगित कर दिये गये थे और यह आशा की गई थी कि वे इस बैठक में लिये जा सकेंगे। पर हम पहले ही निश्चय कर चुके हैं, दो

[अध्यक्ष]

कमेटियों का निर्माण किया जाये—एक यूनियन के विधान के सिद्धांतों का निर्णय करने के लिए और दूसरी प्रान्तों के लिए अनुकरणीय विधान तैयार करने के लिए। मैंने पहले घोषणा की थी कि यह कमेटियां उन प्रस्तावों पर भी विचार करेंगी। मैं समझता हूं कि ऐसा ही किया जायेगा और इन प्रस्तावों के बारे में और कुछ नहीं करना पड़ेगा।

फिर एक बात और है जिसके बारे में मैं कुछ चिन्तित-सा रहा हूं और मैं चाहता हूं कि सभा भी उस चिन्ता में भाग ले। इसलिये नहीं कि मैं तत्काल उसका कोई जवाब चाहता हूं, पर मैं यह चाहता हूं कि सदस्यगण उसे ध्यान में रखें। हमारी सभी कार्यवाहियां अंग्रेजी में इसलिए चल रही हैं कि बहुत-से सदस्य ऐसे हैं जो राष्ट्रभाषा से परिचित नहीं हैं—इसीलिए मसविदे भी अंग्रेजी में ही बनाये जा रहे हैं। मसविदों में बहुत-सी अभिव्यक्तियां ऐसी प्रयोग की गई हैं जो कला की शब्दावली अर्थात् विशिष्ट भाषा कही जा सकती है जो किसी न किसी विधान से ली गई हैं। इन विधानों में से कुछ के अनेक कानूनी भावार्थ लगाये जाते हैं और ऐसी भाषा के प्रयोग द्वारा हम उन भावार्थों की प्रक्रिया को भी अपने विधान में आकर्षित कर रहे हैं। भविष्य में—बहुत शीघ्र नहीं; पर आगे चलकर ऐसा समय आ सकता है, जब हम सम्भवत: अंग्रेजी पर निर्भर न रहेंगे और अगर आज विधान अंग्रेजों में पास किया जाता है तो वही मौलिक विधान बना रहेगा और भावार्थ का कोई भी सवाल उसी भाषा के द्वारा हल होगा जिसमें आज यह विधान पास किया जा रहा है। प्रश्न यह है कि क्या हम भविष्य में सदा अपने विधान की व्याख्या अंग्रेजी भाषा में ही करेंगे, क्या भविष्य में सदा हमारे न्यायाधीशों को अंग्रेजी भाषा से परिचित होना आवश्यक होगा, जिससे वह विधान की व्याख्या कर सकें? यदि विधान अंग्रेजी में पास किया जाता है तो स्वाभाविक रूप से यही परिणाम होगा। इस समय कोई ऐसा सुझाव पेश करना कठिन है जो इस कठिनाई को सुलझा सके। मैं सोच रहा था कि हम विधान का मसविदा तैयार होने पर जितनी जल्दी हो सके उसका अनुवाद करा लें और अन्त में उसे अपने मौलिक विधान के रूप में पास करें। *(हर्ष-ध्वनि)* यदि कहीं भावार्थ लगाने में कोई अस्पष्टता या कठिनाई पेश आई तो अंग्रेजी प्रति भी हवाले के लिये सामने रहेगी, पर मैं व्यक्तिगत रूप में यह चाहता हूं कि विधान मौलिक रूप में हमारी मुख्य भाषा में हो, अंग्रेजी में नहीं, *(उच्च हर्ष-ध्वनि)* जिससे हमारे भावी न्यायाधीश अपनी भाषा पर निर्भर हो सकें, विदेशी भाषा पर नहीं। *(हर्ष-ध्वनि)*। जैसा कि मैं कह चुका हूं मैं इस बात को कोई जवाब पाने की आशा से नहीं कह रहा हूं और मैं चाहता हूं कि सदस्यगण इस पर विचार करेंगे और इस बीच यदि आप की आज्ञा हो तो जहां तक शीघ्र सम्भव होगा इस प्रस्तुत विधान का अनुवाद अपनी भाषा में करा लूंगा। मैं उस कठिनाई का अनुभव कर रहा हूं कि इसे ऐसे रूप में रखा जाना चाहिए जिससे इसका ठीक-ठीक भावार्थ लगाया जा सके, क्योंकि कला की निश्चित शब्दावली हमारी भाषा में नहीं भी हो सकती, और हमें स्वभावत: ऐसे खण्ड जोड़ने पड़ेंगे जिनसे कला सम्बन्धी उक्तियों की अभिव्यक्ति हो सके।

पर यदि मुझे आपकी आज्ञा मिल जाये, तो हम एक प्रयत्न कर देखेंगे। मुझे भय है हमारे वर्तमान कर्मचारी इस अनुवाद के लिए काफी नहीं हैं और हमें ऐसे व्यक्तियों की सहायता लेनी होगी जो उच्च श्रेणी के लोग हैं और इसे कर सकते हैं। मैं नहीं जानता कि मेरे लिए यह सम्भव होगा, पर आपकी आज्ञा अगर मिल जायेगी तो मैं प्रयत्न करूंगा। मैं सोचता था कि मैं यह बात आपके विचारार्थ रखूं क्योंकि यदि विधान स्थायी विधान बनने जा रहा है। कम-से-कम कुछ काल के लिए रहने वाला है, तो हम इसे ऐसी भाषा में नहीं रहने दे सकते, जो हमारी नहीं है। हमें उस समय के लिए व्यवस्था करनी है। जब हमें अपनी ही भाषा पर निर्भर होना होगा और वह भी दूर भविष्य में नहीं। इसलिये मैं यह बात सभी के ध्यान में लाया हूं जिससे सदस्यगण भी इस पर विचार करें और अपने परामर्श दें, आज नहीं तो बाद में—विधान का अन्तिम रूप तैयार होने के पहले।

इस अवसर पर कुछ सदस्य अपनी राय प्रकट करना चाहते थे।

मैं इस पर किसी विवाद की आशा नहीं करता। मैंने केवल अपने विचार प्रकट किए हैं और इस पर बाद में विचार किया जायेगा।

***अध्यक्ष:** एक बात और रह गई है।

श्री विश्वम्भर दयाल त्रिपाठी (संयुक्तप्रांत : जनरल): इस बारे में मैं कुछ............।

***श्री बी.जी. खेर** (बम्बई : जनरल): मुझे इस पर नियम सम्बन्धी आपत्ति है। महाशय, यह तो वाद-विवाद है।

***अध्यक्ष:** कुछ भी हो, अब उन्हें समाप्त कर लेने दीजिए।

श्री विश्वम्भर दयाल त्रिपाठी: मैं इस सिलसिले में कोई बात नहीं कहना चाहता। लेकिन नियमों में यह दिया गया है कि हमको सारी कार्यवाही अर्थात् एजेंडा आदि हिंदुस्तानी भाषा में भी मिला करेंगी। यह ठीक है कि इसमें दिक्कतें हैं, लेकिन फिर भी यह बात बहुत आवश्यक है। मैं प्रार्थना करूंगा कि आयन्दा अधिवेशन से इसका कुछ प्रबंध अवश्य किया जाये।

***अध्यक्ष:** जी हां, मैं आपको उत्तर देता हूं कि किसलिए यह चीज पूरी नहीं हो सकी है। मेरा हिंदुस्तानी का स्टाफ पूरा नहीं था, लेकिन इंतजाम किया जा रहा है और मैं समझता हूं कि जल्दी इंतजाम हो सकेगा।

***श्री बालकृष्ण शर्मा** (संयुक्तप्रांत : जनरल): इस विषय में जो आदेश दिये गए हैं उनके विरुद्ध कुछ न कहकर क्या मैं यह जान सकता हूं कि विधान का अनुवाद, जिसके लिए प्रबन्ध किया जा रहा है, हिन्दी में होगा या उर्दू में, या वह ऐसी भाषा में होगा जो दोनों ही खिचड़ी होगी?

***अध्यक्षः** वह ऐसी भाषा में होगा जो समझी जा सके। *(हास्य)*

एक और विचारणीय बात हमारे लिए है यानी इस असेम्बली की अगली बैठक। इस सभा की गत बैठक में सभा ने प्रस्ताव पास करके अगली बैठक अप्रैल में करने का फैसला किया था। मैं यह सुझाव रखूंगा कि कोई भी तारीख या महीना निश्चित करने के बदले सभा यह बात मेरे ऊपर छोड़ दे कि अगली बैठक कब हो।

***माननीय सदस्यः** जी हां।

***अध्यक्षः** मैं यह वचन दे सकता हूं कि ज्यों ही मैं समझूंगा कि सभा के लिए सामग्री प्रस्तुत हो गई है, मैं उसे बुला लूंगा।

***श्री के. सन्तानम्ः** मेरा सुझाव है कि इस आशय का एक रस्मी प्रस्ताव पास कर लिया जाये।

***अध्यक्षः** यही मैं भी कह रहा हूं। एक रस्मी प्रस्ताव रखा जा सकता है।

श्री विश्वम्भर दयाल त्रिपाठीः इस सिलसिले में मुझे यह बात.........।

***अध्यक्षः** इसको हो जाने दीजिए।

***श्री सत्यनारायण सिन्हा** (बिहार : जनरल)ः अध्यक्ष महोदय, मेरा प्रस्ताव है कि विधान-परिषद् ऐसी तारीख के लिए स्थगित की जाये जिसका निश्चय अध्यक्ष कर सकते हैं।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव है कि विधान-परिषद् उस तारीख तक के लिए स्थगित की जाये जिसका निश्चय अध्यक्ष कर सकते हैं। क्या मैं समझूं कि सभा इस प्रस्ताव को स्वीकार करती है?

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***श्री आर.के. सिधवाः** इस प्रस्ताव का समर्थन करते हुए मैं एक अनुरोध करना चाहता हूं—वह यह कि अब चूंकि तारीख आप पर छोड़ दी गई है। महाशय, क्या कृपा कर आप यह व्यवस्था करेंगे कि एजेंडा हम सबके निवास स्थानों पर सभा होने के काफी समय पहले पहुंच जाये जिससे हमें उसके अध्ययन के लिए समय मिल जाये।

***अध्यक्षः** मैं आपसे आरम्भ में ही कह चुका हूं कि मैं तारीख तभी निश्चित करूंगा जब मेरे पास वाद-विवाद के लिए पर्याप्त सामग्री प्रस्तुत हो जायेगी।

(श्री त्रिपाठी से) आप कुछ कहना चाहते थे।

श्री विश्वम्भर दयाल त्रिपाठीः मुझे जो सिधवा साहब ने आपके सामने कहा है, वही कहना था और कोई बात नहीं।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि हमने अब अपना काम समाप्त कर लिया है। अब सभा उस समय तक के लिए स्थगित होती है जिसका निश्चय मैं करूंगा।

इसके बाद विधान-परिषद् उस समय तक के लिए स्थगित हुई जिसका निश्चय अध्यक्ष करेंगे।

अष्टम अनुसूची

(अनुच्छेद ३४४ (१) और ३५१)

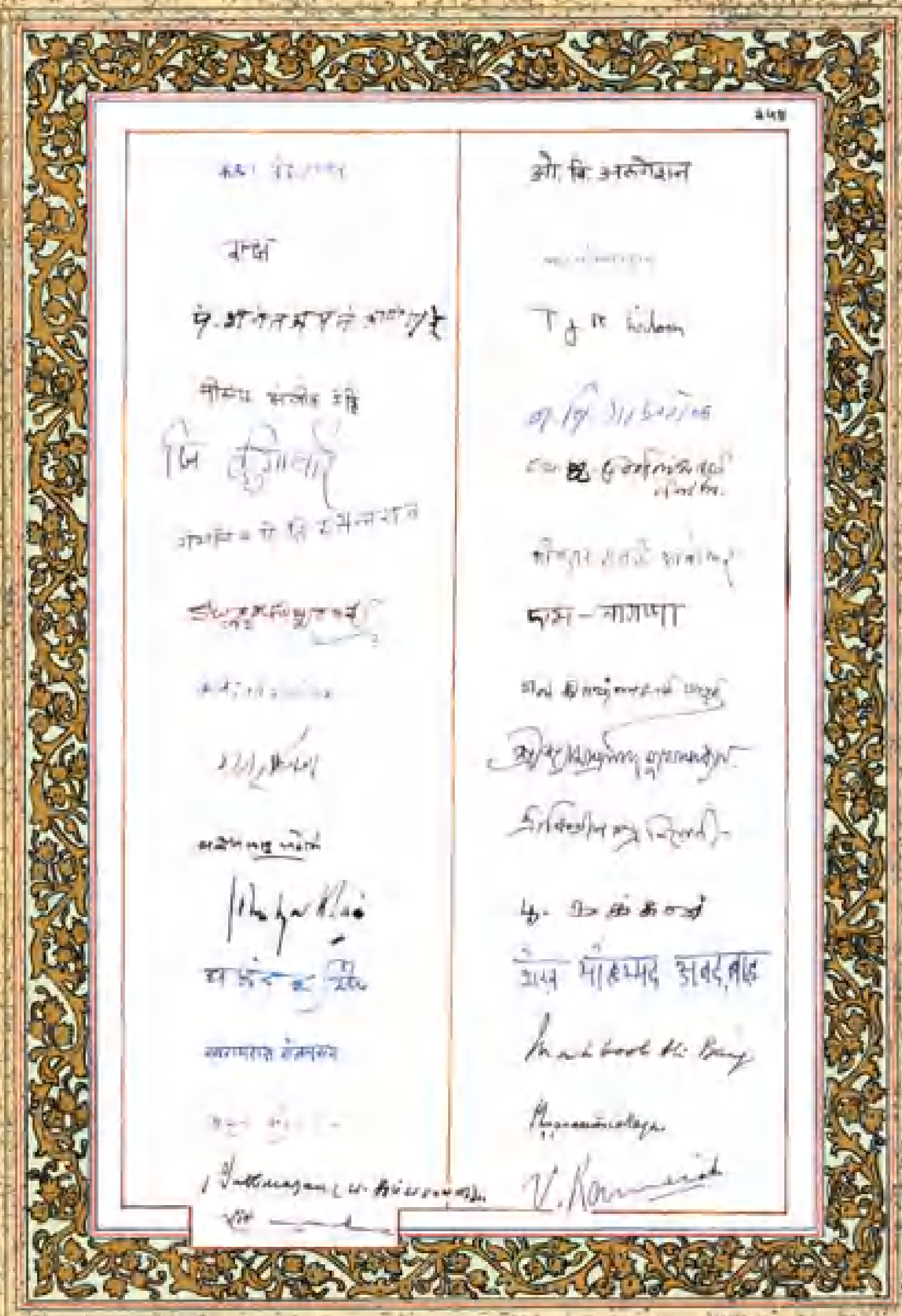
भाषाएं

१. असमिया
२. उड़िया
३. उर्दू
४. कन्नड़
५. कश्मीरी
६. गुजराती
७. तामिल
८. तेलुगु
९. पंजाबी
१०. बंगला
११. मराठी
१२. मलयालम
१३. संस्कृत
१४. हिन्दी

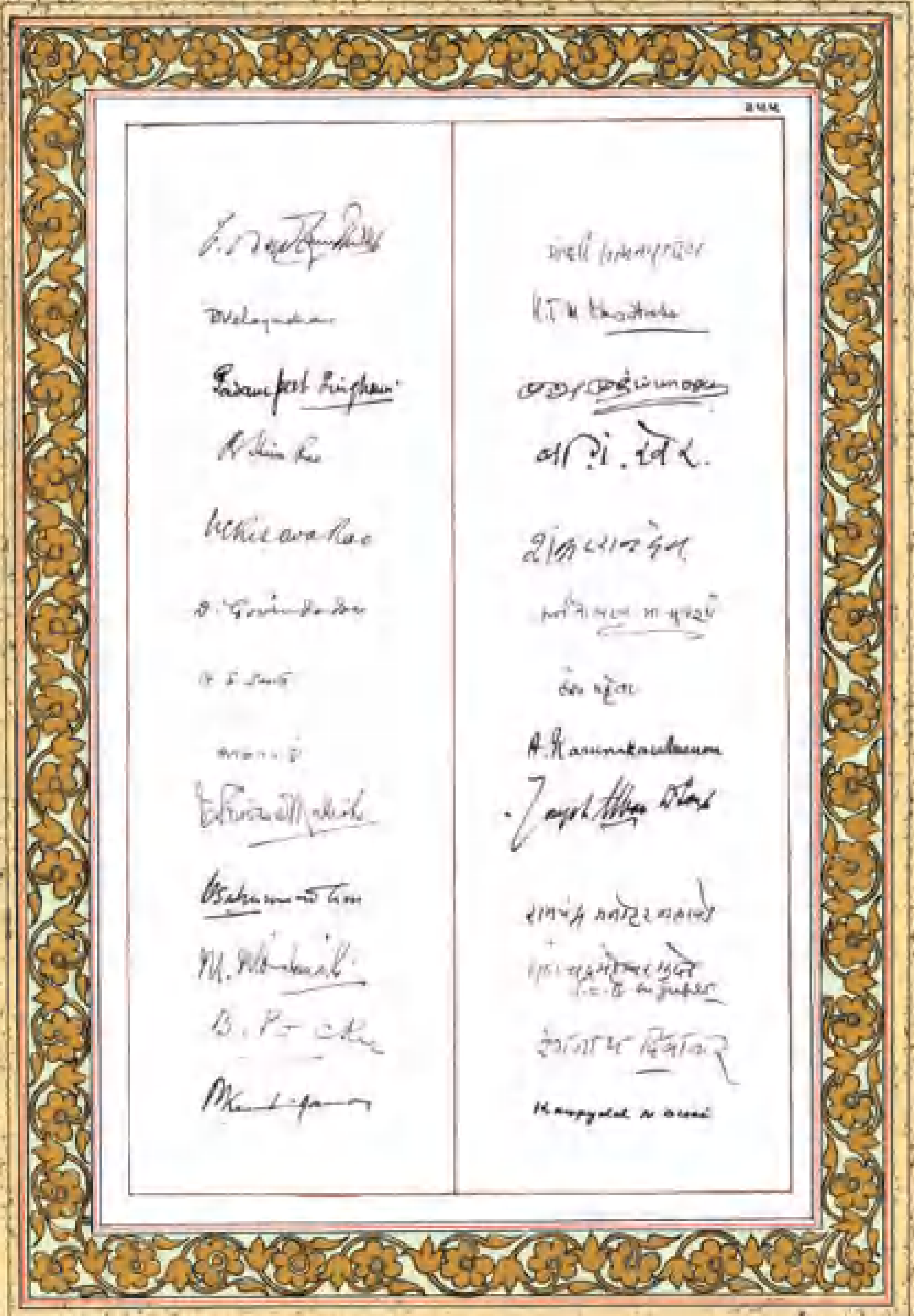
जवाहरलाल नेहरू

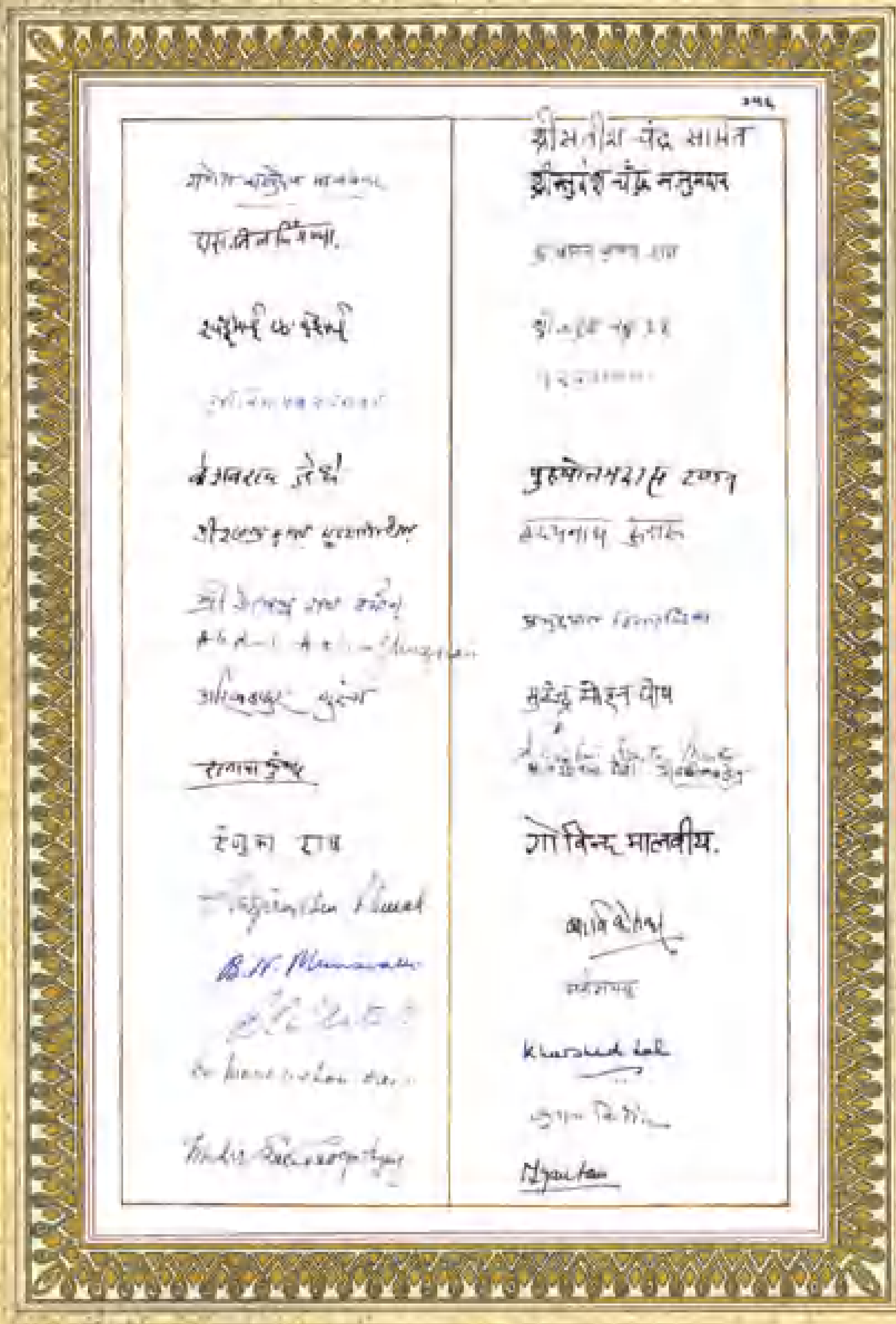
Ammu Swaminathan

T. Prakasam

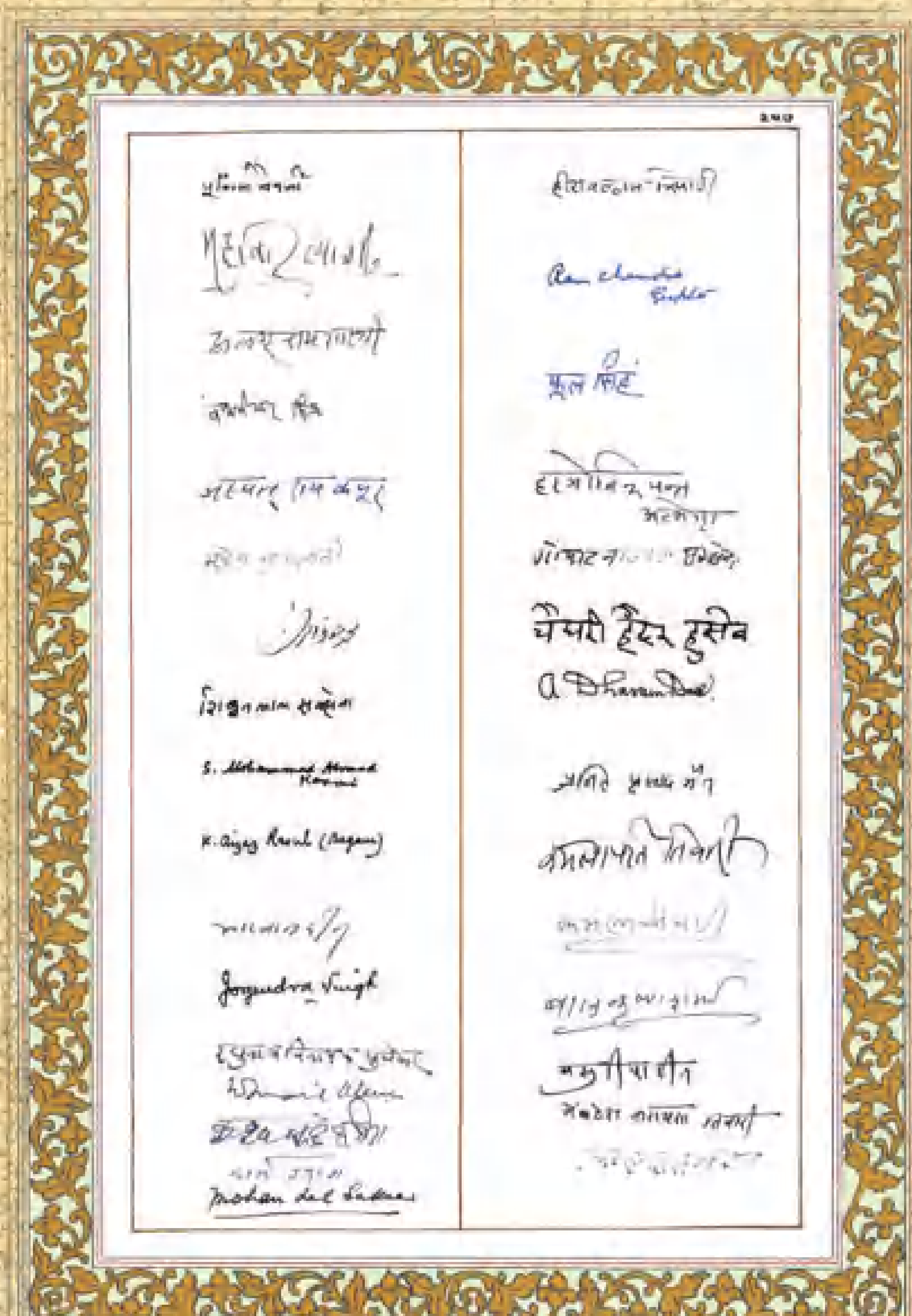


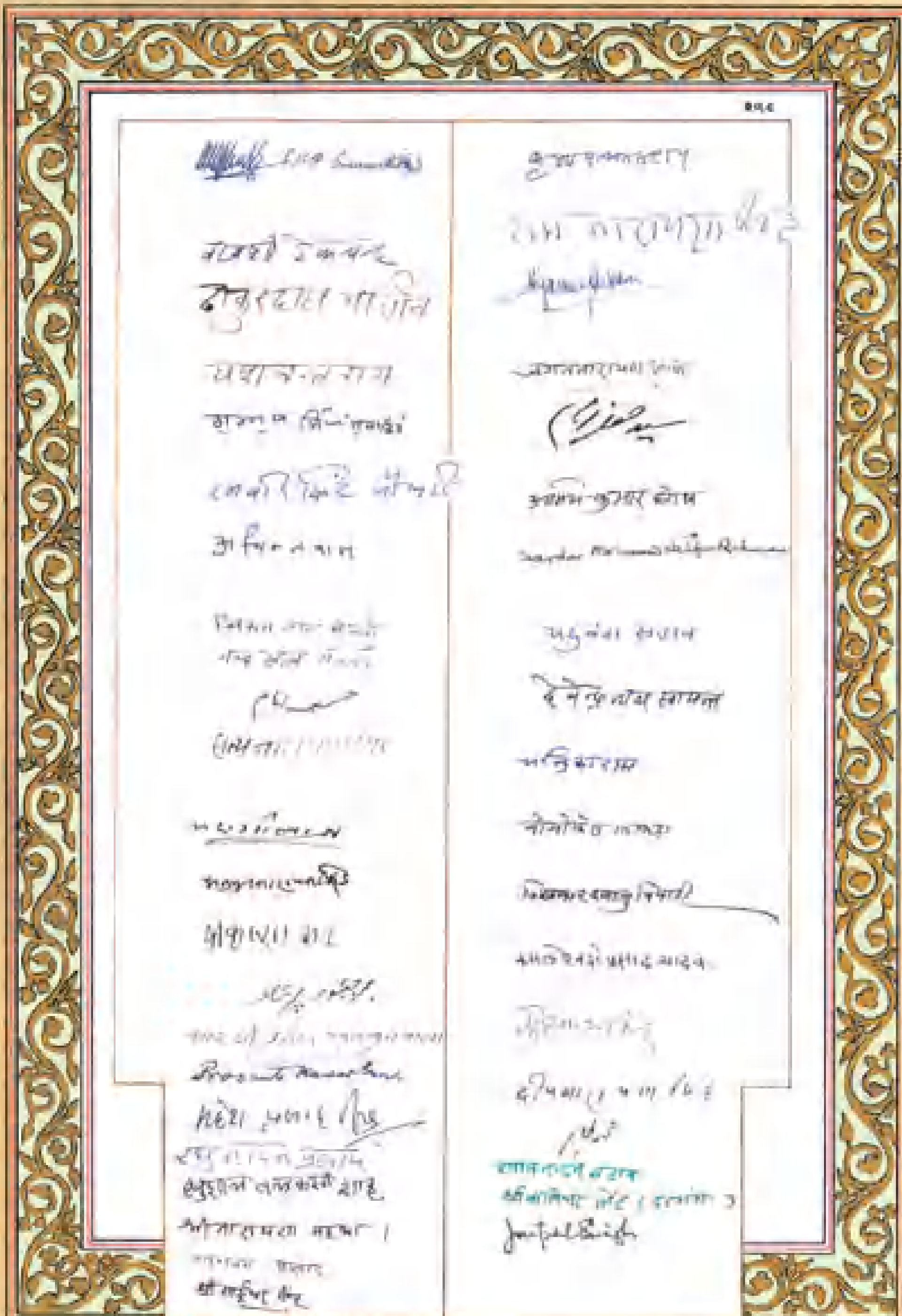
Mahboob Ali Baig

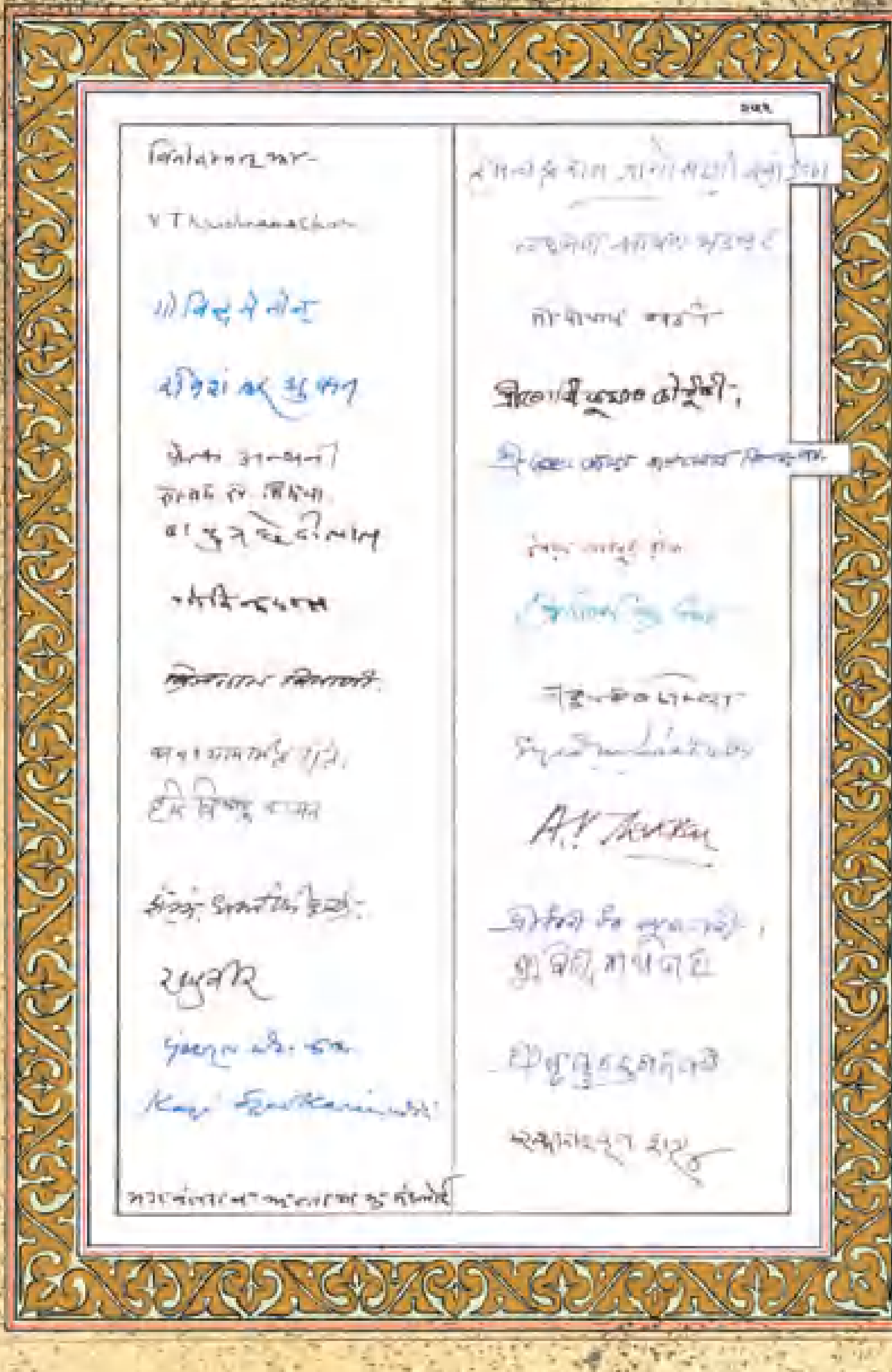


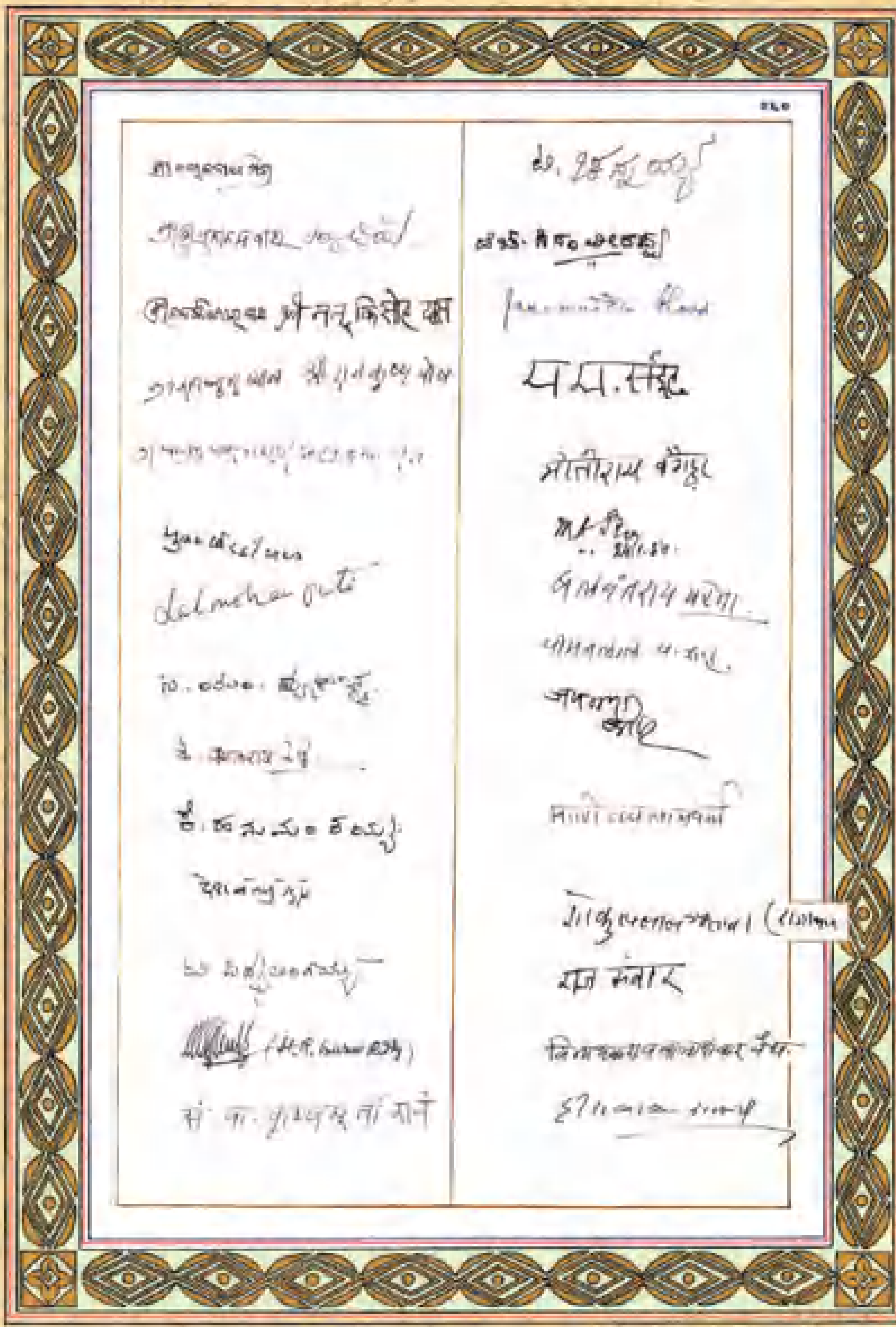


श्री सतीश चंद्र सामंत
पुरुषोत्तमदास टण्डन
सुरेन्द्र मोहन घोष
रेणुका राय
गोविन्द मालवीय.
B.N. Munavalli
Khurshed Lal

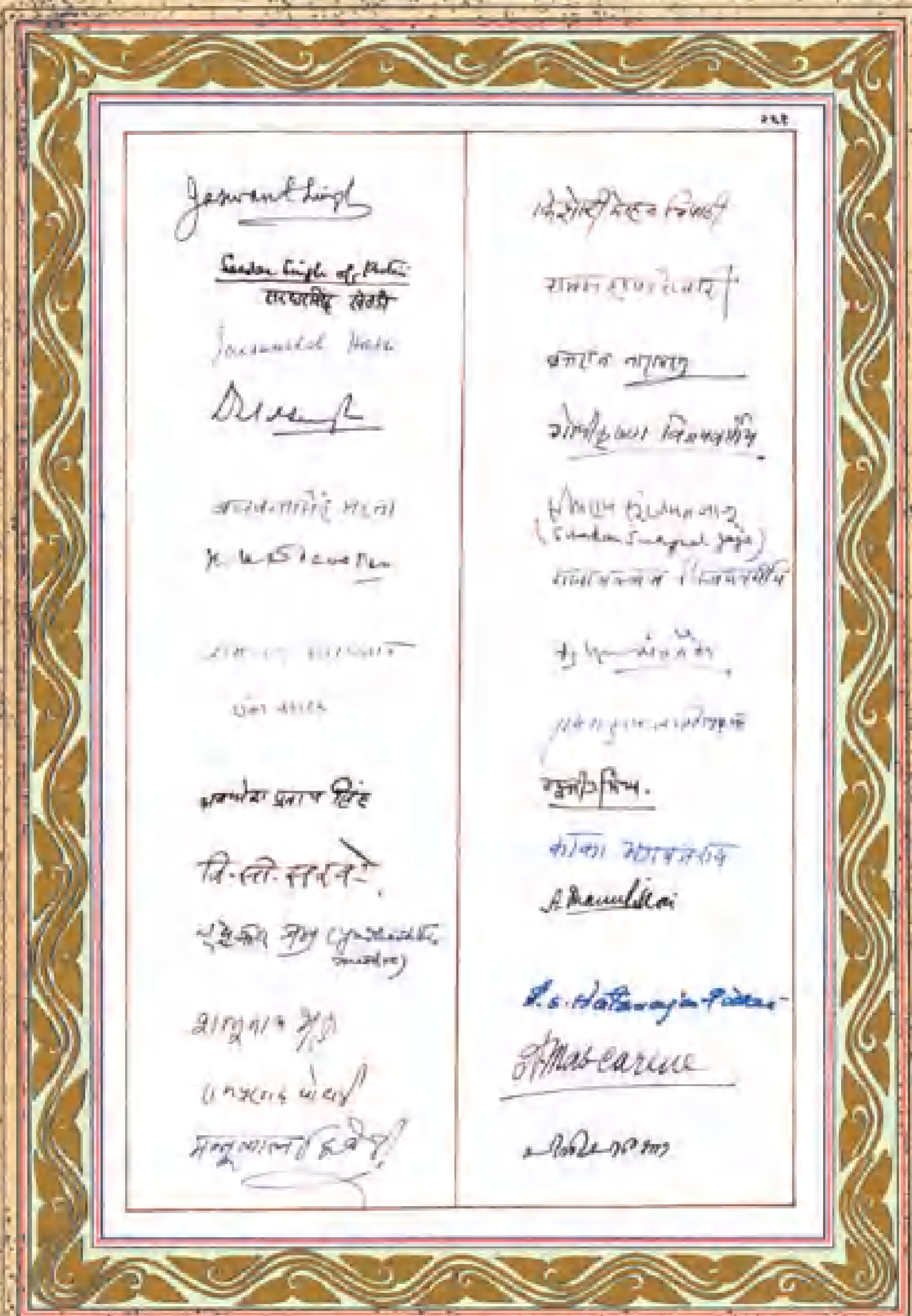

चौधरी हैदर हुसैन
Jogendra Singh
Mohan Lal Saksena



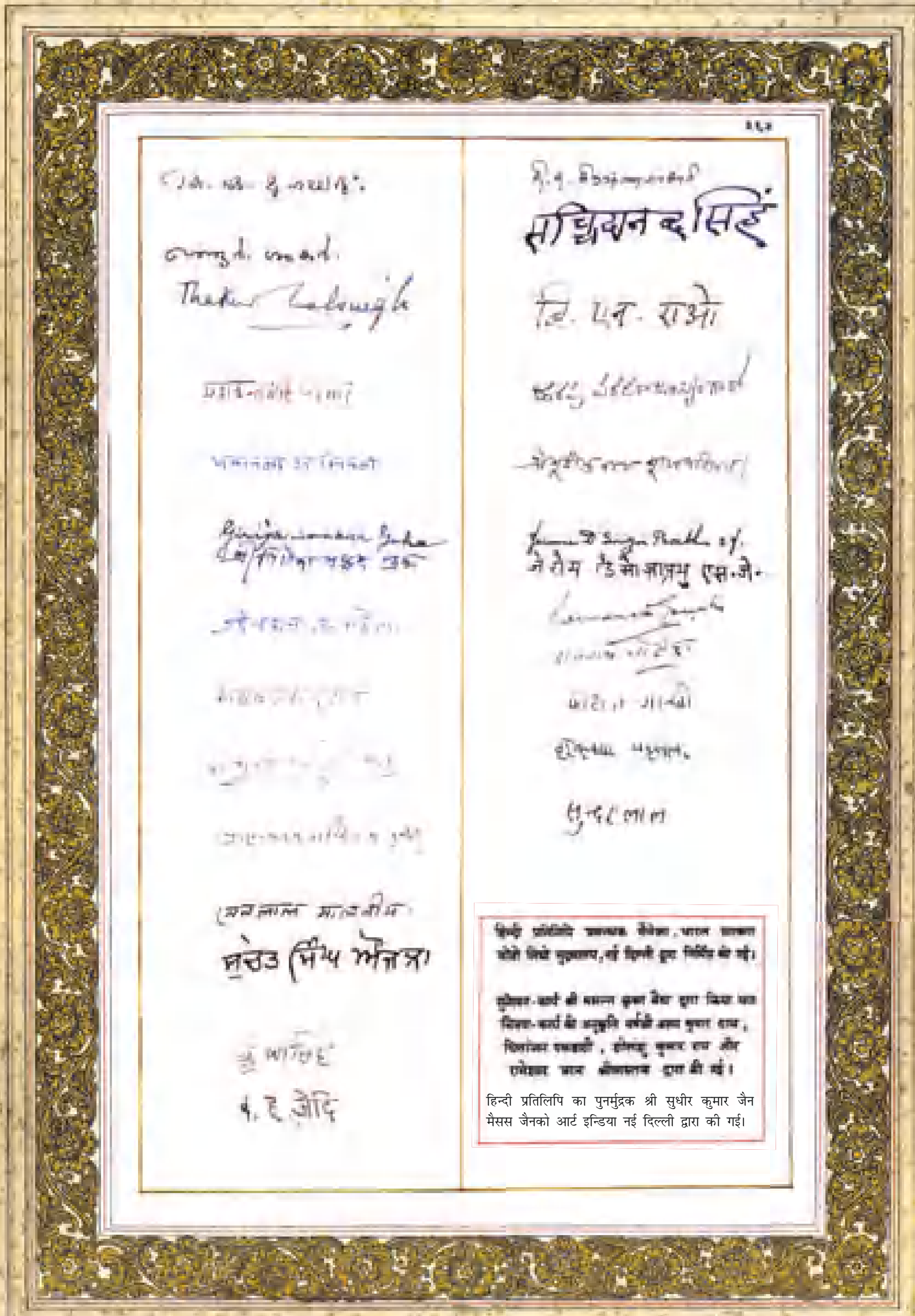

V T Krishnamachari



श्री नन्द किशोर झा
मोतीराम



Jaswant Singh
Sardar Singh of Khetri
सरदारसिंह खेतडी



हिन्दी प्रतिलिपि का पुनर्मुद्रक श्री सुधीर कुमार जैन मैसस जैनको आर्ट इन्डिया नई दिल्ली द्वारा की गई।

भारत की संविधान सभा की
राज्यवार सदस्यता-सूची

भारत की संविधान सभा की राज्यवार सदस्यता-सूची

(23 अगस्त, 1949 की स्थिति के अनुसार)

प्रान्त-235

क्रम सं.	राज्य	सदस्यों की संख्या
1.	मद्रास	49
2.	बम्बई	21
3.	पश्चिम बंगाल	21
4.	संयुक्त प्रान्त	55
5.	पूर्वी पंजाब	16
6.	बिहार	36
7.	मध्य प्रान्त और बरार	17
8.	असम	8
9.	उड़ीसा	9
10.	दिल्ली	1
11.	अजमेर-मेरवाड़ा	1
12.	कुर्ग	1
	भारतीय राज्य-72	
1.	मैसूर	7
2.	कश्मीर	4
3.	बड़ौदा	3
4.	जोधपुर	2
5.	जयपुर	3
6.	बीकानेर	1
7.	कोल्हापुर	1
8.	मयूरभंज	1

क्रम सं.	राज्य	सदस्यों की संख्या
9.	सिक्किम-कूच बिहार	1
10.	त्रिपुरा, मणिपुर और खासी राज्य	1
11.	रामपुर-बनारस	1
12.	उड़ीसा राज्य	4
13.	मध्य प्रान्त और बरार राज्य	3
14.	मद्रास राज्य	1
15.	बम्बई राज्य	4
16.	हिमाचल प्रदेश	1
17.	काठियावाड़ संयुक्त राज्य (सौराष्ट्र)	4
18.	मत्स्य संयुक्त राज्य	2
19.	राजस्थान संयुक्त राज्य	4
20.	विन्ध्या प्रदेश संयुक्त राज्य	4
21.	ग्वालियर-इन्दौर-मालवा (मध्य भारत) संयुक्त राज्य	7
22.	पटियाला और पूर्वी पंजाब राज्य संघ	3
23.	ट्रावनकोर और कोचीन संयुक्त राज्य	7
24.	कच्छ	1
25.	जूनागढ़	1
26.	शेष राज्य	1

भारतीय संविधान सभा के सदस्य-गण



बैठे हुए बाएं से दाएं : श्री फ्रैंक एथनी, सेठ गाविन्द दास, दरभंगा के महाराजा, श्री खुर्शीद लाल, श्री एन. माधवराव, श्रीमती रेणुका राय, माननीय डॉ. जीवराज एन. मेहता, माननीय श्री मोहनलाल सक्सेना, श्री के.एम. मुंशी, श्रीमती हंसा मेहता, श्री ओ.पी. रामास्वामी रेड्डियार, कुमारी ऐनी मैस्करीन, श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी, माननीय अनुग्रह नारायण सिन्हा, माननीय श्री कृष्ण सिन्हा, श्री ए.वी. ठक्कर, श्री लक्ष्मीकांत मैत्रा, माननीय श्री आर.आर. दिवाकर, श्री एम. अनन्तशायनम् अय्यंगर, माननीय श्री एन.वी. गाडगिल, माननीय श्री एन. गोपालस्वामी अय्यंगर, माननीय श्री जयरामदास दौलतराम, माननीय एम. अबुल कलाम आजाद, माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, माननीय एस. बलदेव सिंह, माननीय डॉ. जॉन मथाई, माननीय श्री जी.वी. मावलंकर, माननीय राजकुमारी अमष्टत कौर, माननीय श्री जवाहरलाल नेहरू, डॉ. एच.सी. मुकर्जी, माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद (राष्ट्रपति), श्री टी.टी. कृष्णामाचारी, माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल, माननीय श्री जगजीवनराम, माननीय श्री रफी अहमद किदवई, माननीय डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी, माननीय श्री बी.जी. खेर, श्री अब्दुल हलीम गजनवी, माननीय पंडित रविशंकर शुक्ला, माननीय श्री गोपीनाथ बरदलोई, श्री टी. प्रकासम, माननीय जे.जे.एम. निकोस राय, माननीय श्री के.सी. नियोगी, डॉ. पट्टाभि सीतारमय्या, श्री के.सी. रेड्डी, श्री पी. गोविन्द मेनन, श्री दामोदर स्वरूप सेठ, प्रो. निबारन चन्द्र लुसकर, डॉ. रघुबीरा, माननीय श्री के. संतानम, श्री डी.बी. मातारी, श्री रोहिणी कुमार चौधरी, श्री बाबू रामनारायण सिंह, श्री लक्ष्मीनारायण साहू, श्री आर.के. सिधवा, श्रीमती सुचेता कृपालानी, पारलकीमेडी के महाराजा, श्री बी. दास, श्री जसपतराय कपूर।

खड़े हुए पहली पंक्ति बाएं से दाएं : माननीय श्री के.बी. सहाय, श्री श्यामनंदन सहाय, श्री ताजमल हुसैन, श्री सोंरगधर सिन्हा, प्रो. एन.जी. रंगा, डॉ. रघुनंदन प्रसाद, श्री काजी सैयद करीमुद्दीन, श्री जफर इमाम, श्री मोहम्मद ताहिर, श्री मोहम्मद हिफाजुर रहमान, श्री लतीफुर रहमान, श्री एम. नारायण मेहता, माननीय श्री विनोदानन्द झा, श्री गुप्तनाथ सिंह, श्री दीपनारायण सिन्हा, श्री जादूबंस सहाय, श्री अमियो कुमार घोज़, श्री आर.ई. पटेल, लेफ्टिनेंट कर्नल बृजराज नारायण, सरदार सुचेत सिंह, श्री उपेन्द्र नाथ बर्मन, श्री बोनीफेस लाकरा, श्री बृजेश्वर प्रसाद, मास्टर नन्दलाल, श्री राम सहाय, श्री बी.एन. मुलावाली, श्री मणिक्यालाल वर्मा, श्री आर.बी. विजय वर्गिया, श्री बलवंतसिंह मेहता, श्री सीताराम एस. जाजू, ठाकुर लाल सिंह, श्री चन्द्रीकरम, प्रो. यशवन्त राय, डॉ. धरम प्रकाश, श्री प्रगीलाल, श्री भगवानदीन, श्री दयाल दास भगत, श्री पी. कक्कण, श्री देवेन्द्रनाथ सामन्त, ठाकुर छेदीलाल, श्री रामचन्द्र गुप्त, श्री बी.एन. तिवारी, श्री के.सी. शर्मा, श्री जयनारायण व्यास, श्री कल्लुर सुभा राव, श्री बी.एन. बियानी, श्री गोकुललाल असवा, लाला अचिन्त राम, श्री जसवंत सिंह जी, श्री गिरिजाशंकर गुहा, श्री पी.डी. हिम्मत सिंहका, श्री एच.जे. खांडेकर, श्री एस. नागाप्पा, श्री अरिबहादुर गुरुंक, श्री सी.एम. पुनाचा, श्री वी. रमैय्या, श्री एस.सी. मजूमदार, श्री यू.एस. मल्लाया, श्री सुरेन्द्र मोहन घोज़।

खड़े हुए दूसरी पंक्ति बाएं से दाएं : डॉ. पी.के. सेन, श्री सरदार सिंह, खेतड़ी के. बहादुर, श्री ए. तनुपिल्लै, श्री बनारसी प्रसाद झुनझुनवाला, श्री जगत नारायण लाल, श्री हुसैन इमाम, श्री किशोरी मोहन त्रिपाठी, श्री मोहम्मद अहमद काज़मी, श्री अब्दुररौफ, श्री बी.एम. गुप्ता, श्री महेश प्रसाद सिंह, कर्नल बी.एच. जैदी, डॉ. पी. सुब्बारायन, श्री एस.वी. कृष्णमूर्तिराव, श्री आर.सी. उपाध्याय, श्री के.पी. यादव, श्री शांतनु कुमार दास, ठाकुर किशन सिंह, श्री एल.के. भारती, श्री वी.सी. केसवा राव, श्री भगवत प्रसाद, श्री जयपाल सिंह, श्री एम. तिरुमुल राव, श्रीमती जी. दुर्गा बाई, श्रीमती कमला चौधरी, श्रीमती दक्षायणी वेलायुदाहन, श्रीमती अम्मू स्वामीनाथन, बेगम ऐजाज रसूल, श्री टी. सिद्दलिंगैया, श्री मोहनलाल गौतम, श्री बी.एल. सोंधी, श्री महाबीर त्यागी, श्री आर.एल. मालवीय, श्री रामप्रसाद पोटई, श्री सारंगधर दास, श्री के. हनुमनतिया, श्री एच.वी. कामत, श्री एच. गुरुव रेड्डी, लाला राजकंवर, सरदार रंजीत सिंह, श्री पदमयन सिंघानिया, श्री एम.ए. मुथिया चेट्टियार, सैयद मोहम्मद सादुल्ला, श्री टी.जे.एम. विल्सन, आचार्य जुगलकिशोर, चौधरी हैदर हुसैन, श्री के.टी.एम. अहमद इब्राहिम, श्री बी. पोकर, श्री जी.के. विजयवर्गिया, श्री मोहम्मद इस्माइल, श्री ओ.वी. अलागेसन, श्री सी. सुब्रमणियम्, श्री हीरालाल शास्त्री, श्री गोकुलभाई डी. भट्ट, लेफ्टिनेंट कर्नल के.आर. दलेल सिंहजी, पंडित हृदयनाथ कुंजरू, डॉ. बक्शी टेकचंद।

खड़े हुए तीसरी पंक्ति बाएं से दाएं : श्री प्राणलाल ठाकुरलाल मुंशी, श्री कुलधर चालिहा, श्री मुकुट बिहारीलाल भार्गव, श्री विनायक राव बी. वैद्य, सरदार हुकम सिंह, श्री महबूब अली बेग, चौधरी रणबीर सिंह, श्री नंद किशोर दास, श्री ठाकुरदास, भार्गव, डॉ. जोसेफ अलबन डिसूजा, श्री टी. चन्निया, कैप्टन अवधेश प्रताप सिंह, श्री शंभु नाथ शुक्ल, श्री के.एम. जाधे, श्री एच.वी. पतास्कर, श्री आर. बी. कुम्भर, माननीय एन. संजीव रेड्डी, श्री डी. गोविन्द डौस, श्री एस. भुपेन्द्रसिंह मान, श्री एच. सिद्दकीरिया, श्री पी. कुन्हीरामन, श्री ए.के. मेनन, श्री अननजी अर्जन खीमजी, श्री राम सहाय तिवारी, श्री मन्नूलाल द्विवेदी, श्री खंडूभाई देसाई, श्री के.एन. देसाई, श्री सी.सी. शाह, डॉ. वाई.एस. परमार, श्री दरबार गोपालदास ए. देसाई, श्री बलवंतराय जी. मेहता, श्री जयसुखलाल हाथी, श्री अजीत प्रसाद जैन, सरदार जोगिन्दर सिंह, श्री बालकृष्ण शर्मा, श्री एम.एल. चट्टोपाध्याय, श्री हरगोविन्द पंत, श्री आर.वी. धुलेकर, श्री मसूर्य दिन, श्री बंसीधर मिश्र, माननीय जी.एस. गुप्ता, श्री बी.ए. मंदलोई, श्री एस.टी. धर्माधिकारी, श्री कुसुमकांत जैन, श्री राज बहादुर, श्री देशबंधु गुप्त, श्री विश्वनाथ दास, श्री एम.सी. वीरा बाबू, श्री वी. नाडिमुकु पिल्लै, श्री टी.ए. रामलिंगम चेट्टियार, श्री के. कामराज, श्री गोविन्द मालवीय, श्री एस. निजलिंगप्पा, माननीय श्री सत्यनारायण सिंह।

खड़े हुए अंतिम पंक्ति बाएं से दाएं : श्री कमलापति त्रिपाठी, प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना, पंडित मोतीराम बागरा, श्री मौलाना मोहम्मद सैयद मसूदी, श्री मिर्ज़ा मोहम्मद अ.फज़ल बेग, श्री सुन्दरलाल, श्री सतीशचन्द्र, श्री युधिष्ठर मिश्र, श्री अरुणचन्द्र गुहा, श्री वी. सुब्रमणियम, श्री एम. सत्यनारायण, श्री बी.के. दास, श्री सतीश चन्द्र सामंत, श्री जसीमुद्दीन अहमद, डॉ. मनमोहन डौस, श्री पी.टी. चाको, श्री के.ए. मोहम्मद, श्री आर. शंकर, श्री पी.एस. नटराज पिल्लै, श्री बी. शिव राव, माननीय राजकृष्ण बोस, श्री वी.आई. मुनीस्वामी पिल्लै, श्री वी.एस. सरवते, डॉ. पी.एस. देशमुख, श्री गोपाल नारायण, श्री पी.एल. नरसिंह राजू, श्री एल.एस. अक्तर, श्री आर.एम. नलवडे, श्री वी.डी. त्रिपाठी, श्री अलगुराय शास्त्री, श्री ए. धर्मदास, श्री एच.वी. त्रिपाठी, श्री ज्ञानी गुरुमुखसिंह मुसाफिर, श्री नवाब मोहम्मद इस्माइल खान, श्री मौलाना हसरत मोहनी, श्री लाल मोहन पाटी, (पांच पुलिस कर्मी), श्री काला वेंकटराव, श्री नजीरुद्दीन अहमद, श्री काका भगवंत राय।

चित्रांकन: 7 अप्रैल, 1949